शिक्षा क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका
राष्ट्रीय छात्रशक्ति

राष्ट्रीय छात्रशक्ति

वर्ष-47 ■ अंक-01 ■ अप्रैल 2025 ■ ₹10 ■ पृष्ठ-36

यशवंत शती

(1925-2025)

अभाविप गतिविधियों में प्रा. यशवंतराव केलकर

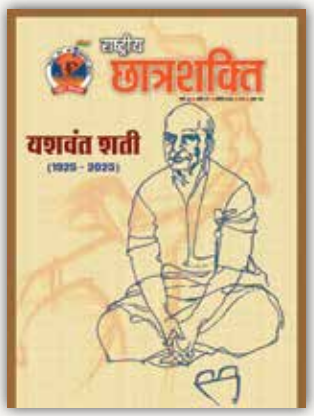

राष्ट्रीय
छात्रशक्ति

शिक्षा क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष–47, अंक–01
अप्रैल 2025

संपादक
आशुतोष भटनागर
संपादक–मण्डल
संजीव कुमार सिन्हा
अवनीश सिंह
अभिषेक रंजन
अजीत कुमार सिंह

संपादकीय पत्राचार
राष्ट्रीय छात्रशक्ति
26, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग,
नई दिल्ली - 110002.
फोन : 011-23216298
www.chhatrashakti.in
rashtriyachhatrashakti@gmail.com
www.facebook.com/Rchhatrashakti
www.twitter.com/Rchhatrashakti
www.instagram.com/ Rchhatrashakti

स्वामी, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक **राजकुमार शर्मा** द्वारा 26, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, आई.टी.ओ. के निकट, नई दिल्ली - 110002 से प्रकाशित एवं ओशियन ट्रेडिंग कं., 132 एफ. आई. ई., पटपड़गंज इण्डस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली-110092 से मुद्रित। **संपादक** *पीआरबी अधिनियम के तहत समाचारों के चयन के लिए जिम्मेवार।

अबकी बार

05

संगठन शिल्पी

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की योजना से 1959 में यशवंतराव जी को अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) का दायित्व सौंपा गया। अभाविप को पंजीकृत होने के बाद दस वर्ष बीत चुके थे, जब...

संपादकीय 04

डा. हेडगेवार कुलोत्पन्न यशवंतराव 10

महान संगठक 13

Yashwant Rao Ji : The master craftsman of human organisation 15

अनामिकता की प्रतिमूर्ति यशवंतराव जी 18

'टीम' कार्यपद्धति के प्रतिपादक यशवंतराव केलकर 21

यशवंत जन्मशती का संदेश 22

पूर्व योजना–पूर्ण योजना के प्रतिपादक प्रा. यशवंतराव केलकर 24

The necessity behind the abolition of titles under Article–18 of Constitution of India 28

लद्दाख के विद्यार्थियों ने की राष्ट्रीय एकात्मता की अनुभूति 30

मैथिली मृणालिनी बनी पटना विश्वविद्यालय छात्रसंघ की पहली महिला अध्यक्ष 31

सजीव हुई 'विविधता में एकता' की भावना 32

डा. बाली ने किया राष्ट्रवादी चिंतन से हिन्दी साहित्य का पोषण 33

अजातशत्रु थे अभाविप के पूर्व राष्ट्रीय उपाध्यक्ष दत्ता वी. नाईक 34

वैधानिक सूचना : राष्ट्रीय छात्रशक्ति में प्रकाशित लेख एवं विचार तथा रचनाओं में व्यक्त दृष्टिकोण संबंधित लेखकों के हैं। संपादक, प्रकाशक एवं मुद्रक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। समस्त प्रकार के विवादों का न्यायिक क्षेत्र दिल्ली होगा।

संपादकीय

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) की 75 वर्षों की संगठनात्मक यात्रा को चरणों अथवा पड़ावों के रूप में देख सकते हैं। पहला चरण निस्संदेह स्वतंत्रता और विभाजन की पृष्ठभूमि में, उसकी स्थापना के समय युवा होती पीढ़ी की सपनीली आकांक्षाओं को मूर्त रूप देने प्रयास के रूप में देखा जा सकता है।

दूसरा, स्व. यशवंतराव के प्रवेश और उनके सहयात्री के रूप में आचार्य गिरिराज किशोर, नारायण भाई भंडारी, दत्ता जी डिडोलकर का संगठन-कार्य में जुटना, जिसने संगठन को गढ़ने की न केवल संकल्पना तैयार की, अपितु युवा कार्यकर्ताओं की एक ऐसी पीढ़ी को तैयार किया, जो उन लोगों के प्रत्यक्ष परिषद-कार्य में न रहने पर भी उसी रीति-नीति और उन्हीं निष्कर्षों और प्रयोगों के प्रति स्वागतशीलता को अक्षुण्ण रखते हुए तीन दशक तक संगठन की मेरुरज्जु बनी रही। इस समूचे कालखंड में संगठन को राष्ट्रव्यापी बनाने के साथ-साथ उसे स्थायित्व देने, कार्यपद्धति विकसित करने, नए कार्यक्षेत्रों की विशिष्टता को ध्यान में रख कर नए आयाम प्रारंभ करने का कार्य हुआ। निस्संदेह यशवंतराव इन सबकी धुरी थे, किन्तु टोली की संकल्पना करते हुए उन्होंने इसे 'समान में प्रथम' का स्वरूप दिया। यही आगे चल कर कार्यपद्धति की विशिष्टता बना।

तीसरा चरण परीक्षा का काल था। स्वाधीनता के पहले शताब्दियों तक चले राष्ट्रीय अस्मिता और मानवीय मूल्यों पर होने वाले आक्रमणों का सफल प्रतिकार युवाओं ने किया था। आपातकाल के रूप में लोकतंत्र और मानवीय स्वतंत्रता पर छाए तानाशाही के बादल तत्कालीन पीढ़ी के युवाओं के स्वत्व को चुनौती थे। एक कसौटी प्रस्तुत की गई थी, जिस पर देश के छात्रों और युवाओं को परखा जाना था। यशवंतराव के नेतृत्व में अभाविप टोली द्वारा गढ़े गए कार्यकर्ताओं की मालिका इस कसौटी पर खरी उतरी। बर्बर अत्याचारों के विरुद्ध वन्देमातरम् का उद्घोष करके हर यातना को सहते हुए भी अभाविप कार्यकर्ता यशस्वी होकर निकले।

स्व. यशवंतराव के प्रवेश और उनके सहयात्री के रूप में आचार्य गिरिराज किशोर, नारायण भाई भंडारी, दत्ता जी डिडोलकर का संगठन-कार्य में जुटना, जिसने संगठन को गढ़ने की न केवल संकल्पना तैयार की, अपितु युवा कार्यकर्ताओं की एक ऐसी पीढ़ी को तैयार किया, जो उन लोगों के प्रत्यक्ष परिषद-कार्य में न रहने पर भी उसी रीति-नीति और उन्हीं निष्कर्षों और प्रयोगों के प्रति स्वागतशीलता को अक्षुण्ण रखते हुए तीन दशक तक संगठन की मेरुरज्जु बनी रही।

आपातकाल के अनुभव ने उन्हें भी नींद से जगा दिया जो यह मान चुके थे कि 'अब वतन आजाद है'। संवैधानिक अधिकारों को निलंबित कर स्वतंत्र भारत में भी अपने ही नेतृत्व द्वारा औपनिवेशिक काल की याद दिलाए जाने से यह रेखांकित हो गया कि स्वाधीनता पाना ही नहीं, अपितु उसे बनाए रखने के लिए भी निरंतर साधना करना आवश्यक है। यहीं से संगठन का चौथा चरण प्रारंभ होता है-जब सबने अनुभव किया कि 'नवीन पर्व के लिए नवीन प्राण चाहिए'। संगठन कार्य में तेजी से संख्यात्मक और गुणात्मक विस्तार, पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं की नई श्रृंखला तथा राष्ट्रीय प्रश्नों पर प्रभावी प्रतिक्रिया ने अभाविप को एक नई ऊंचाई प्रदान की।

1980 का दशक इस अर्थ में महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। पूर्वोत्तर में चला आ रहा संघर्ष चरम पर पहुंचा, असम की घुसपैठ ने वहां के स्थानीय जन-जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया, श्रीलंका में लिट्टे के सशस्त्र संघर्ष के संदर्भ में नीतिगत विफलता, डंकल प्रस्ताव और विश्व व्यापार संगठन के गठन, उसके साथ जुड़े आर्थिक प्रभाव तथा उसकी प्रतिक्रिया में राष्ट्रव्यापी स्वदेशी अभियान, बोफोर्स सौदे में शीर्षस्थ राजनीतिक नेतृत्व पर भ्रष्टाचार के दाग, मंडल आयोग की अनुशंसाओं की आड़ में देश को अराजकता में धकेलने के प्रयास और इस सबके मध्य देश की एकात्मता को जगाने के लिए एकात्मता यात्रा और स्वामी विवेकानंद के शिकागो भाषण की शताब्दी को निमित्त बनाकर किए जा रहे राष्ट्रीय प्रयास समाज मन को मथते रहे। रामजन्मभूमि पर मंदिर निर्माण का आंदोलन एक दशक के राष्ट्रीय आलोड़न का शीर्षबिन्दु था। अभाविप के सामने यह चुनौती पहली बार थी, जब उसे इतने महत्वपूर्ण राष्ट्रीय मुद्दों पर अपनी वैचारिक और क्रियात्मक भूमिका का निर्धारण करना था और यशवंतराव साथ नहीं थे। किन्तु यह उनके द्वारा गढ़ी गई कार्यपद्धति और दिखाई गई दिशा ही थी, जिसने परिषद को न तब और न आज तक, कभी भी अपने मार्ग से विचलित होने दिया।

स्व. यशवंतराव केलकर जी देहरूप में आज हमारे मध्य नहीं हैं किन्तु प्रत्येक कार्यकर्ता के मन और विचार में उनकी झलक दिख ही जाती है। उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर हम सभी उनके प्रति श्रद्धानत हैं।

आपका
संपादक

संगठन शिल्पी

■ प्रा. मिलिंद मराठे

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की योजना से 1959 में यशवंतराव जी को अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) का दायित्व सौंपा गया। अभाविप को पंजीकृत होने के बाद दस वर्ष बीत चुके थे, जब यशवंतराव जी अभाविप में आए। उनके मन में कुछ बातें स्पष्ट थी। सबसे पहली बात, भारत के मौलिक चिंतन के अनुरूप, चिति के अनुरूप, एक आदर्श छात्र संगठन, जिसकी जड़ें पूर्णतः भारतीय तत्व ज्ञान में समाहित हों। ऐसे संगठन को गढ़ना, यह यशवंतराव जी का उद्देश्य था। दूसरा यह भी लक्ष्य था कि छात्र संगठन यानी कुछ विषयों पर लड़ने-भिड़ने वाला, आंदोलन करने वाला, इतना ही उसका स्वरूप ना हो। वह संगठन देश-समाज संवेदना, व्यक्ति निर्माण और विश्व बंधुत्व, यहां तक अपने विचार का स्तर ले जाए, यह भी उनका उद्देश्य था। छात्र संगठन में छात्र कम समय के लिए ही रहेंगे, तो छात्र संगठन में जो मुख्य घटक है छात्र, वह प्रवाहमान है, तो यह भी चुनौती यशवंतराव जी के सामने थी कि प्रवाहमान सदस्यों का स्थायी संगठन कैसे बनाया जाए? फिर तीसरा एक और विशिष्ट लक्ष्य था। कोई भी संगठन विचार, व्यवहार, व्यवस्था और आर्थिक पक्ष, इन सभी में स्वतंत्र, स्वायत्त होना चाहिए। ऐसे कुछ उद्देश्यों को लेकर उन्होंने कार्य का प्रारंभ किया। उनके कार्य की पद्धति बड़ी व्यवस्थित थी। वह मुंबई में रहते थे। अंग्रेजी के प्राध्यापक थे। तो उन्होंने मुंबई इकाई को एक मॉडल के रूप में बनाने का सोचा। जो भी प्रयोग होता, वह मुंबई इकाई में करके देखते। अच्छा रहा तो पूरे देश में लागू किया जाता। सुधार की आवश्यकता होने पर और सुधार करते। यह उनकी पद्धति रही। विद्यार्थियों से संपर्क करने के लिए नए-नए कार्यक्रम होने चाहिए, ऐसा उन्होंने सोचा।

मुझे कई बार आश्चर्य होता है कि उन दिनों में

यशवंतराव जी ने सभी छात्रों के लिए शाम को तीन घंटा, जिसको हम एक मिलन जैसा बोलते हैं, खाना, पीना, संगीत, इस प्रकार के कार्यक्रम का आयोजन किया, जिसमें कई सारे छात्र आ गए। छात्रों में शास्त्रीय संगीत की रुचि बढ़े, इसलिए उन्होंने महाकवि कालिदास संगीत प्रतियोगिता प्रारंभ की। ऐसे ही एक बहुत ही छोटा कार्यक्रम विद्यार्थी सत्कार उन्होंने आरंभ कराया। फर्स्ट क्लास फर्स्ट फेलिसिटेशन प्रोग्राम अर्थात प्रथम आने पर छात्रों द्वारा छात्रों का किया गया सम्मान। उसमें वह प्रशस्ति पत्र पर एक ही वाक्य लिखते थे कि आपका वर्तमान कर्तत्व देश के विकास में, भारत मां के चरणों में अर्पित हो। वह कहते थे कि जो छात्र मेधावी छात्रों का सम्मान कर रहे हैं, उनके ऊपर यह संस्कार होना चाहिए कि मुझे तो संभवतः फर्स्ट क्लास फर्स्ट आना संभव नहीं होगा। परंतु जो फर्स्ट क्लास फर्स्ट आया है, उसके बारे में मन में ईर्ष्या न रखते हुए, खुले हृदय से उसके कर्तत्व को सम्मानित करना है। जो प्रथम आया है, उसको यह कहना कि देखो आपका कर्तव्य नित्य हो। लेकिन ऐसे कर्तव्य का फल यदि भारत मां के चरणों में अर्पित नहीं हुआ। तो उस कर्तत्व का, बढ़ते हुए कर्तत्व का, वास्तविक उपयोग है क्या!

किसी भी छात्र ने कोई भी नई संकल्पना बताई, वह कितनी भी अव्यवहारिक हो, ऐसा अनुभव करके यशवंतराव जी ने छात्र को कभी हतोत्साहित नहीं किया। वह कहते थे कि बढ़िया है, करके देखेंगें। तब एक-एक चरण पूछते कि कैसे करेंगें? इसके बाद छात्र को समझ आता कि वह कुछ ज्यादा ही बोल गया। इस मानसिकता के कारण इंजीनियरिंग, कृषि, मेडिसिन आदि सभी प्रकार के छात्र अभाविप के साथ अपने विचार एवं अपनी कल्पना को लेकर जुड़े और संगठन का काम किया।

यशवंतराव जी ने कार्यकर्ता विकास पर बहुत ध्यान दिया। वह यह जानते थे कि कार्यकर्ता विकास सिर्फ भाषण का विषय नहीं है। व्यक्ति का जो विकास होता है, वह केवल व्यक्तिगत बातचीत एवं उसके सामने व्यवहारिक उदाहरण रखने से होता है। एक बार यशवंतराव जी, भाभी जी (शशि जी) के साथ जा रहे थे। रास्ते में उन्हें अपना एक नवजवान कार्यकर्ता मिल गया। यशवंतराव जी को देखकर बोला कि कभी मेरे घर भी आइए। उत्साह के साथ वह एक वाक्य यह और बोल गया कि भाभी जी को भी लेकर आईएगा। यशवंतराव जी ने उसको तुरंत रोककर कहा कि भाभी जी मेरा बक्सा या मेरा कोई पेन नहीं हैं, जिनको मैं बिना पूछे ला सकूं। उनका भी कार्य होगा। कोई व्यस्तता होगी। तो उनकी उपलब्धता देखकर आप उनको आमंत्रित करो। मैं भी आमंत्रित करूंगा। इससे उस कार्यकर्ता के मन में यह बात आ गई कि किसी की भी पत्नी को टेकन फॉर ग्रांटेड नहीं लेना चाहिए क्योंकि वह भी एक स्वतंत्र व्यक्ति है। इसीलिए भाभी जी को भी लेकर आओ-यह कोई तर्कसंगत बात नहीं है। जाने-अनजाने में स्त्री-पुरुष समानता का एक संस्कार उसको अपने व्यवहार से यशवंतराव जी ने दे दिया।

मैं कोल्हापुर में पूर्णकालिक कार्यकर्ता था और यशवंतराव जी प्रवास पर आए। पूर्णकालिक कार्यकर्ता होने के कारण मेरी और उनकी भेंट हुई। क्या चल रहा है? कितने कालेज हैं? कितने कार्यकर्ता हैं? काम ठीक चल रहा है न? उन्होंने पूछा। मैंने बड़े उत्साह के साथ सब बताया। एक घंटे के बाद उनको दूसरी जगह जाना था। तो जाते समय उन्होंने कहा कि मिलिंद, हम कल मिलेंगे और आपसे बात करेंगे कि आपका कैसा चल रहा है। मुझे समझ नहीं आया। मैंने कहा- 'अभी तो आपको बताया। उन्होंने कहा कि अभी आपने जो बताया, यह आपके कार्यक्रम, गतिविधि, संगठन के काम का वृत्त था। आपकी मनोस्थिति, आपका मूड, उत्साह, आपके मन में क्या पीड़ाएं हैं। आप स्वस्थ है न, मन से? आनंद से? यह तो आपने बताया नहीं। तो मुझे यह जानना है। उस समय मुझे ध्यान में आ गया कि वह केवल कार्यकर्ता की गतिविधियों का ब्यौरा लेने में उत्सुक नहीं थे, वह तो आरंभिक बिंदु था। वह इसके लिए ज्यादा उत्सुक थे कि मेरा मन कैसा सोच रहा है? कहीं उसमें त्रुटि तो नहीं? यह जानने के लिए उत्सुक थे। ऐसे एक-एक कार्यकर्ता के साथ उन्होंने अंतरंग संवाद प्रस्थापित करते हुए उसके अंतर्मन के जो बिंदु सहज स्वभाव के होते थे, जो कार्यकर्ता को चुभते थे, उसको वह समझते थे।

एक प्रसंग और है। मुंबई में एक त्यौहार के दौरान कुछ कार्यकर्ता की टोली ने सोचा कि यशवंतराव जी को थोड़ा परेशान करते हैं और रात को एक बजे हम दस-पन्द्रह कार्यकर्ता उनके घर गए और घंटी बजा दी। हम तो देख रहे थे कि गुस्सा करेंगे, क्या करेंगे? इतनी रात को आए तो क्यों आए, क्या बताना, क्या कारण बताना? लेकिन यशवंतराव राव जी ने दरवाजा खोला और एकदम हंसते

हुए अपने चिर-परिचित हास्य मुद्रा में कहा- अरे आप सब लोग आ गए। आ जाए, क्या करेंगे? कैसे करेंगे? चाय बनाऊं क्या मैं? हमारी तो योजना असफल हो गई। हम लोग अंदर गए। उस समय तो उन्होंने कुछ नहीं कहा और पानी लेकर आए और बाद में उन्होंने कहा कि कार्यकर्ता के लिए मेरे घर के दरवाजे हर समय बिना किसी शर्त के सिर्फ खुला नहीं रहना चाहिए, स्वागत से खुले रहना चाहिए। यह बड़ा संस्कार उन्होंने उस घटना से दिया। वह भी तब, जब हम उनकी परीक्षा लेने गए थे कि वह कैसे गुस्सा करेंगे? ऐसे ही छोटे-छोटे उदाहरण से वह कार्यकर्ता को गढ़ते थे।

एक और घटना मेरे बहुत निकट के मित्र कार्यकर्ता के साथ घटित हुई। उसको स्नातक स्तर पर आर्थिक दिक्कत का सामना करना पड़ा तो वह यशवंतराव जी के पास गया। उसने कहा कि मुझे कुछ दिक्कत है परीक्षा फॉर्म भरना है, उसके लिए कुछ पैसे चाहिए। आप दे सकते हैं क्या? अब देखो एक अध्यापक कार्यकर्ता की, वो भी 87 से पहले, क्या आमदनी होगी। लेकिन यशवंतराव जी ने कहा कि मैं करता हूं और उनके हाथ में पैसे दे दिए। कार्यकर्ता का काम निपट गया। स्नातक हो गया, स्नातकोत्तर हो गया, यशवंतराव जी भी भूल गए। वह नौकरी पर लग गया। वेतन मिलने के बाद वह यशवंतराव जी के घर आए और उनको कहा कि सर, आपको याद होगा, शायद नहीं होगा भी। आपने जो मुझे आर्थिक मदद की उसी कारण से आज मैं इस स्थान पर हूं। तो ऐसे में पैसे आपको वापस देने आया हूं। तो आप कृपा करके इसको ले लीजिए। यशवंतराव जी ने फिर से उसे प्रेम से कहा कि बहुत बढ़िया नौकरी लग गई। रख दो मेज पर। फिर उस पैसे को हाथ लगाया और कहा कि मैंने इसे स्वीकार कर लिया। अब मेरा एक काम और करो, आप यह पैसे मेरे मानकर अपने पास रखो और अब किसी छात्र को कोई समस्या या आर्थिक दिक्कत हो तो यह पैसे उसको देकर उसकी मदद करो। इसके बाद उस कार्यकर्ता ने कहा कि जीवन भर के लिए मुझे एक सीख मिल गई। अपने स्वयं के कमाए हुए पैसे से भी शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण विषय पर कोई अटक गया है तो उसकी खुले मन से सहायता करनी चाहिए और किसी भी प्रकार की आकांक्षा नहीं करनी चाहिए। ऐसे कई विषय यशवंतराव जी के मन में रहे।

यशवंतराव जी संगठन के बारे में क्या सोचते थे? वह मानते थे कि अभाविप, भारतीय छात्रों का संगठन है। इसलिए सभी मत-पंथ के छात्रों को अभाविप में लाने का ईमानदारी से प्रयास करना चाहिए। चाहे वह ईसाई छात्र हों या चाहे वह मुस्लिम छात्र हों। वह मानते थे कि स्वाधीनता आंदोलन के समय में विभाजन की विभीषिका के कारण शायद हिंदू और मुस्लिम दोनों समुदायों में एक दरार या अविश्वास बन गया होगा। स्वाभाविक है, लेकिन स्वाधीनता मिलने के बाद की कम से कम दूसरी, तीसरी पीढ़ी में तो यह सभी भावनाएं हटाकर, 'हम सब भारत माता के पुत्र हैं,' यह भावना सभी मत पंथ के छात्रों में उत्पन्न कर सकते हैं क्या? यह वह अभाविप कार्यकर्ताओं को बड़े आग्रह के साथ कहते थे।

दूसरा एक और विषय, जो उनके मन के बहुत करीब था। इसके दो भाग है। एक है- समाज के सबसे अंतिम स्तर पर खड़े हुए छात्र को भी अभाविप में लाना। अभाविप

में किसी की जाति नहीं पूछी जाती है। लेकिन महाराष्ट्र में तो छुआछूत एक समय में होती रहती थी। तो समाज के उन सब वर्गों के छात्रों को भी अभाविप में लाना। उनको सम्मान के साथ, अभाविप में जैसा व्यवहार होता है वैसे व्यवहार करना और वह सभी छात्र अंतिमतः भारत माता को पूज्य माने, यह प्रयास करना। केवल इतना ही नहीं, उनका कहना था कि अभाविप समाज का एक प्रतिबिंब होना चाहिए और समाज का अर्थ है- शैक्षिक समाज का। इसीलिए सभी संकायों में धनी-निर्धन, स्त्री-पुरुष, नगरीय-ग्रामीण, सभी जाति एवं भाषा बोलने वाले सभी छात्रों को अभाविप में लाना चाहिए। इसको वह एक शब्द में कहते थे कि अपना कार्य सर्वस्पर्शी होना चाहिए। इसके लिए उन्होंने व्यवहार में परिमार्जन का आग्रह भी किया।

यशवंतराव जी के तीन पुत्र थे आलोक, न्यायस्वरुप और शशिधर। इनमें न्यायस्वरूप और शशिधर लगभग एक ही आयु के थे। यशवंतराव जी सामान्यतः प्रति मई माह की छुट्टी में इन्हीं दो बच्चों को अपने अत्यंत गरीब श्रेणी के मित्रों के यहां रहने भेजते थे। जहां शायद दस फिट गुणा दस फिट का एक ही कमरा हो, शौचालय घर के बाहर हो-एक झोपड़पट्टी जैसे क्षेत्र में वह रहते हों। ऐसे अपने मित्र के या परिचित प्राध्यापक के पास या किसी व्यक्ति के पास आठ दिन रहने के लिए वह भेजते थे। वह कहते थे कि जब तक हम समाज का दर्शन नहीं करते तब तक हम उसकी वास्तविकता नहीं समझ नहीं पाते और अगर अपना स्वयं का पुत्र, ऐसे घरों में आठ दिन रह कर

आता है, तो उसको गरीबी, संवेदना, सहानुभूति यह सब पुस्तक की, शब्दों की बातें बतानी नहीं पड़ती। वह देखने की बाद ही उसको समझ में आ जाता है कि समाज की क्या स्थिति है और मेरा इसमें दायित्व क्या है! अमजद खान, 'शोले' के बड़े खलनायक, उनके कालेज में पढ़ते थे। अमजद खान के साथ उनकी बहुत मित्रता थी तो ऐसे कई छात्र को उन्होंने सोच समझकर एकत्र करके सर्वस्पर्शी काम का आग्रह व्यवहार में लाया।

उन्होंने अभाविप के सभी कार्यकलापों में जो एक अनुपम उपहार दिया, वह है टीम की संकल्पना। उनका कहना था कि देखो एग्जीक्यूटिव कमेटी, जनरल मीटिंग, यह तो अभाविप की एक रचना है। लेकिन केवल उस रचना से काम नहीं चलता। तो एक प्रकार की समान भावना रखने वाले एक-दूसरे के साथ अत्यंत मित्रतापूर्ण व्यवहार करने वाले, एक-दूसरे के साथ प्रगाढ़ विश्वास मन में रखने वाले, ऐसे व्यक्तियों की एक टोली, टीम, प्रत्येक यूनिट से लेकर अखिल भारतीय स्तर तक जुडी होनी चाहिए। उनका यह वाक्य बड़ा ही महत्व का था कि टीम इवॉल्व होनी चाहिए, टीम असाइन नहीं होती। टीम इवॉल्व होती है। जब हर स्तर पर टीम विकसित होगी, तभी कार्य के विविध आयाम, कार्यकर्ता की संभाल, खुद का स्वार्थ ना देखते हुए संगठन के हित में विचार करना, ऐसी कई बातें एक टीम अच्छी तरह से कर सकती है। इसीलिए टीम का निर्माण हर स्तर पर होना चाहिए, यह उनका बड़ा आग्रह था।

अभाविप की कार्यपद्धति एक दृष्टि से अभाविप की सैद्धांतिक भूमिका का ही प्रगटीकरण है। इसलिए कार्यपद्धति के कई सूत्र उन्होंने अपने ही कार्यकाल में आरम्भ किए और स्थिरबद्ध किए। उनका कहना था कि जब तक आप एक संगठन में कार्य पद्धति को स्थिरबद्ध नहीं करते, तब तक वह संगठन अपनी निर्धारित गुणवत्ता तक नहीं पहुंचता। सामान्य मनुष्य का स्वभाव क्या होता है? खुद की गलतियों को ध्यान नहीं देना। लेकिन दूसरों की छोटी-छोटी गलतियां भी ध्यान रखना। लेकिन उन्होंने बिल्कुल उसका विपरीत कहा कि अभाविप की कार्य पद्धति क्या है? स्वयं के प्रति कठोर, दूसरों के प्रति क्षमाशील। अब यह समाज व्यवहार में लाना मुश्किल है, लेकिन यह होना चाहिए। यह उन्होंने आग्रह दिया और प्रत्यक्ष अपने जीवन में उतारा।

कार्यकर्ता के प्रति दृढ़ विश्वास यह भी उन्होंने कार्य पद्धति में स्थापित किया। मुंबई से हम सभी कार्यकर्ता अधिवेशन के लिए जा रहे थे और सब लोगों ने तय किया कि हम विक्टोरिया टर्मिनस आएंगें। सब लोग आ गए, परंतु एक कार्यकर्ता नहीं आया। बाकी लोगों ने कहना शुरू कर दिया कि मालूम था, वह नहीं आएगा। यह बात करते हुए यशवंतराव जी ने उनको रोका। वह भी प्रमुख कार्यकर्ता है, उसको भी मालूम है कि यहां आना है। लेकिन यह सब मालूम होने के बावजूद वह नहीं आया है, इसका एक ही अर्थ है, इसका कोई ऐसा कारण रहा होगा कि वह यहां पर नहीं आएगा। पर मेरा मन तो कहता है कि वह अगले दो स्टेशन में कहीं ना कहीं अपने साथ हो लेगा। और वास्तव में वह दौड़ते-दौड़ते पसीना पोंछते आया और उसने कहा कि यदि मैं वी.टी. आने का सोचता तो मेरी ट्रेन छूट जाती। इसलिए मैं दूसरे स्टेशन पर आकर चढ़ गया हूं। उन्होंने कहा बैठो, बैठो और हंसती हुई नजर उन्होंने हमारे ऊपर डाली। इस प्रकार कार्यकर्ता पर दृढ़ विश्वास यह भी उन्होंने कार्य पद्धति में बताया।

उन्होंने एक बात यह भी बताई कि प्रत्येक कार्यकर्ता महत्व का है, लेकिन कोई भी कार्यकर्ता अपरिहार्य नहीं है। वह उदाहरण देते थे। अपना कार्य चढ़े हुए स्लोप पर (उपरिगामी रोड) पर रोलर धकेलने जैसा है। समझो दस लोग धकेल रहे हैं और दो लोगों ने धकेलना छोड़ दिया तो क्या होगा? बाकी लोगों पर दबाब बढ़ेगा या शायद हो सकता है कि वह धीरे-धीरे पीछे आने लगे। दो लोग और छोड़ गए तो शायद हो सकता है कि वह धीरे-धीरे पीछे आने लगे। और दो लोग छोड़ गए तो और पीछे आएगा। इसीलिए हमारे काम में जुटा हुआ, कोई भी व्यक्ति छूटना नहीं चाहिए। सभी छात्र महत्वपूर्ण है। उसको समझाओ, बुझाओ और नाराज है तो मनाओ। लेकिन सभी लोगों को रोलर आगे धकेलना चाहिए। ज्यादा से ज्यादा लोग जुड़ते जाए। लेकिन सभी मनुष्य हैं। ऐसे करते-करते अगर किसी को लगा कि यह जो रोलर धकेल रहा हूं, यह तो मैं ही धकेल रहा हूं। "आई एम इंडिस्पेसबल इन द ऑर्गेनाइजेशन।" तो अत्यंत प्रेम से लेकिन औपचारिक रूप से यह मन में रखें कि प्रत्येक व्यक्ति महत्व का है, लेकिन अपरिहार्य कोई नहीं। संगठन से ऊपर कोई नहीं। संगठन से ज्यादा महत्व का कोई नहीं। यह भाव हमारे मन में पक्का होना चाहिए। ऐसा व्यक्ति जब हम देखते हैं, और दुर्भाग्य से उसको संगठन से दूर करना पड़ता है तो हम यह भी सोचे कि मेरा भी ऐसा हो सकता है। यह भाव हमारे मन में रखेंगे तो हम ठीक लीक पर चलेंगे। यह वह बताते थे। 'एवरीबॉडी इज इंपोर्टेंट बट नोबडी इस इंडिस्पेंसीबिल।'

केलकर जी एक और बात बड़े स्पष्ट रूप से बताते थे कि कई बार संगठन में काम करते समय हम दूसरों के काम पर टीका टिप्पणी करते हैं। लेकिन वह कहते थे कि देखो, उदाहरण के लिए, एक तीस कमरे की हवेली है। पांच लोगों को काम दिया है कि पांच नंबर का कमरा स्वच्छ करना है, ठीक-ठाक करना है। वह काम करते समय मनुष्य स्वभाव के अनुरूप दूसरे कमरे में झांकता है और वह बोलता है कि देखो वह तो चुपचाप बैठा है, वह तो गपशप कर रहा है, कामचोरी कर रहा है, जल्दी करना चाहिए। वह कहते थे कि आप यह सब क्यों कर रहे हो? आपको क्या काम दिया है उस पर ध्यान दो, वह ठीक करो। ऐसा सभी लोग करेंगे, इस पर विश्वास रखो। तब जाकर अपने आप पूरी हवेली स्वच्छ हो जाएगी। अपना निर्धारित काम पूरी तन्मयता के साथ करना और दूसरों के काम पर टीका-टिप्पणी करके अपना समय और मन पर असर आने ना देना। अपने काम पर ध्यान देना। यह वह बार-बार कहते थे।

मेरा एक स्वयं का अनुभव भी है। मैं अध्यापक कार्यकर्ता था और पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं की बैठक चल रही थी। बैठक समाप्त होने के बाद यशवंतराव जी ने कहा कि प्रत्येक कार्यकर्ता की अगले प्रवास की क्या योजना है? आगे क्या सोचा है? तो उस समूह में से लगभग दस-पंद्रह लोगों ने हाथ खड़ा किया और कहा- यशवंतराव जी, चार दिन बाद दीपावली आ रही है। हम दीपावली पर घर जा रहे हैं। तो एक क्षण में उनका चेहरा बदल गया। उन्होंने कहा कि अच्छा घर जा रहे हैं, जिस क्षेत्र में आप पूर्णकालिक के रूप में काम करते हैं, वह आपका घर नहीं है। आज भी आपको अपने घर की याद आ रही है तो फिर पूर्णकालिक करके अपने समर्पण का प्रयास करने का क्या मतलब है? कल अगर किसी को दीपावली के लिए घर जाना है तो जाए, लेकिन अपना बैग उठाकर जाए, वापस आने की जरूरत नहीं है। पूर्णकालिक काम सबको आएगा, ऐसा मेरा भ्रम नहीं है, यह व्रत है, करना है तो व्रत के साथ, साधना के साथ करना है। नहीं करना है तो आप पूर्णकालिक जीवन से लौट जाओ। सामान्य छात्र के नाते काम करो। जब उन्होंने यह कहा तो सब लोग स्तब्ध हो गए। अवकाश हुआ तो चाय के लिए सब लोग निकल गए। लेकिन उस समय मुझसे उन्होंने कहा कि यह तो मैंने उनको बता दिया। लेकिन हम प्रमुख कार्यकर्ताओं का यह दायित्व है कि अपने-अपने कार्य क्षेत्र में पूर्णकालिकों को अपने घर जैसा लगे। आज दीपावली के समय उनको अपने घर की याद आ गई। क्या यह आप और मेरा अपयश नहीं है कि हमने उनको कार्य क्षेत्र में घर जैसा महसूस नहीं कराया! हमने घर का अनुभव नहीं दिया, इसलिए उनको याद आ रही है। यह हमारा दायित्व है। उनको तो जो बताना था मैने बता दिया। तब यह बात मेरे लिए जीवन भर का सबक बन गई कि अपने क्षेत्र में आने वाला पूर्णकालिक कार्यकर्ता सफल हो या ना हो, लेकिन उसको घर की अपनी याद नहीं आनी चाहिए। उन्होंने जाते-जाते बताया कि यह दायित्व मेरा और मेरे परिवार का है। ■

(लेखक अभाविप के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं।)

डा. हेडगेवार कुलोत्पन्न यशवंतराव

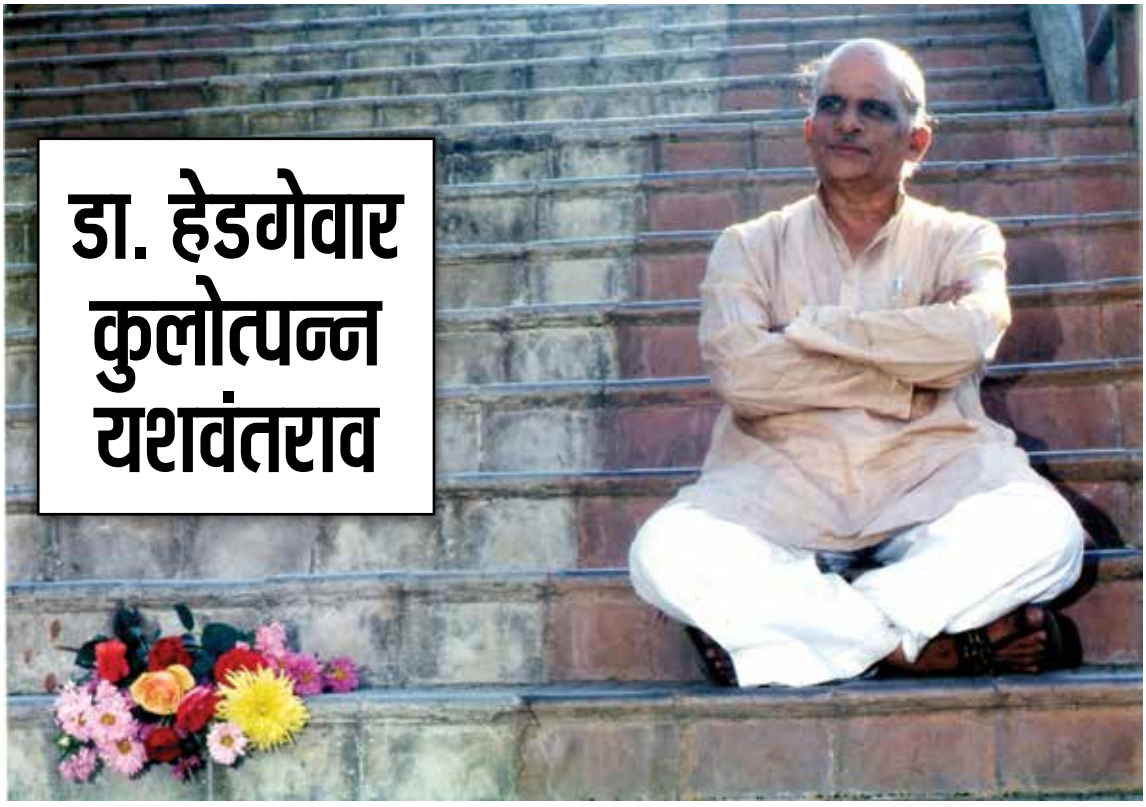

■ सदाशिव देवधर

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) विश्व का सबसे बड़ा छात्र संगठन है। अनेक प्रकार के रचनात्मक, संगठनात्मक, आंदोलनात्मक, उपक्रमात्मक आयामों द्वारा बहुमुखी विकास किया हुआ छात्र संगठन है। अभाविप के वृद्धि-विकास में अनेकों का योगदान रहा है, परंतु केलकर जी का योगदान विशेष महत्व का है। अभाविप यानी केलकर जी, यही सिद्ध हुआ है। अभाविप की सही पहचान संगठन की वृन्द (Team) कार्यपद्धति के विशेष रूप से है। Team Sprit, Team Work, Planning in Advance, Planning in Detail आदि शब्द प्रयोग सर्व दूर परिचित है। शायद अभाविप पहचान की तुलना में (स्व.) केलकर जी की पहचान कम है। यह उनका ही (पद्धति) यश है। व्यक्ति नहीं, विचार, यह महत्व की बात है।

स्व. यशवंतराव का जन्म सोलापुर जिले के पंढरपुर तीर्थ क्षेत्र में हुआ। यहां के माध्यमिक विद्यालय में शिक्षा प्राप्त की। लोकमान्य विद्यालय से एसएससी में उत्तम श्रेणी में सफल हो गए। इसके बाद स. प. महाविद्यालय (पुणे) से बीए उत्तम श्रेणी से सफल हुए। इसके बाद वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक बने। स्वयंसेवक वह बचपन से ही थे। सोलापुर एवं नासिक में कुछ वर्ष प्रचारक के रूप में कार्य किया। इसके बाद वह वापस आए और अंग्रेजी विषय में परास्नातक किया।

उन्हें एक वर्ष संघ योजना से भारतीय जनसंघ का कार्यालय प्रांत प्रमुख का दायित्व दिया गया था। अत्यंत उपयुक्त दीर्घ दृष्टि से कार्यालय रचना, व्यवस्था का क्रियान्वयन किया। उनके पश्चात श्री बाज अत्रे प्रांत कार्यालय प्रमुख बने। वह कहते थे

कि केलकर जी की योजना सभी के लिए भविष्य में अनेक वर्ष आदर्श रही। अपने प्राचीन संगठन सूत्रों का सम्यक चिंतन, मनन एवं क्रियान्वयन केलकर जी करते थे।

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।

इस सूत्र पर सहज व्यवहार से अभाविप कार्यपद्धति खड़ी हुई। उनका विवाह प्रा. शशीकला से हुआ, जो अंग्रेजी की प्राध्यापक थी। केलकर दंपत्ति के तीन सुपुत्र हुए। तीनों उत्तम विद्या से विभूषित हैं। केलकर जी ने एक दृष्टि से अपना जीवन उद्देश्य अभाविप रखा था। अत्यंत बुद्धिमान होते हुए भी अभाविप से कार्यमग्नता के कारण उन्होंने पीएचडी नहीं की। कार्यमग्नता जीवन हो, मृत्यु यही विश्रांति, यह उनके बारे में सच है।

स्व. देवरस जी ने उनके बारे में कहा था कि केलकर जी हेडगेवार कुलोत्पन्न है, इतना कहना ही उनके लिए पर्याप्त है। इससे स्व. केलकर जी का बड़प्पन ध्यान में आता है। 1958 में उन्हें संघ द्वारा अभाविप का कार्य दिया गया। तब वह मुंबई में प्राध्यापक थे। अत्यंत उत्तम अध्यापन शैली, विद्यार्थी वांचन चिंतन यह उनकी विशेषता रही। वह अत्यंत आवश्यक हो, तभी छुट्टी लेते थे। संघ या अभाविप के महत्व के काम या बैठक के लिए अवकाश लेते थे। प्रत्यक्ष जीवन व्यवहार में सादगी का दर्शन होता था एवं नागरिकता का (नीति नियम) पालन दिखाई देता था।

'राशन' के दिनों में कानून से अमान्य ऐसा अनाज का बड़ा थैला एक कार्यकर्ता अन्य जिले से लेकर आया था। केलकर जी को देने की इच्छा थी। केलकर जी ने इन्कार किया और कार्यकर्ता से अपना व्यवहार कैसा हो? यह भी योग्य शब्दों में कहा। एक अभाविप कार्यकर्ता के साथ ही व्यक्तिगत जीवन में भी उनका सम्यक विधि निषेध का आग्रह रहता था। यशवंतराव कार्यकर्ता, प्राध्यापक या पूर्णकालिक (संगठन मंत्री) आदि के लिए ऐसे विशेष प्रकार के जीवन व्यवहार की अपेक्षा करते थे, जिससे सभी के साथ रहकर भी एक समाज हितैषी पहचान स्वाभाविक रूप से ध्यान में आ जाए।

सकारात्मक दृष्टिकोण यह उनकी विशेषता रही। किसी बात के लिए किसी पर दबाव नहीं रहता था परंतु उनका छोटी-छोटी बातों का व्यवहार देखकर, कोई भी व्यक्ति आदर्श अपेक्षा की कल्पना कर सकता है। हर कार्यक्रम, प्रकल्प, अपना काम, कार्यकर्ता-इनके कार्य की वार्षिक सम्यक समीक्षा का आग्रह रहता था अर्थात कार्यक्रम की समीक्षा यथासंभव जल्द हो, यह अपेक्षा रहती थी। व्यक्ति यानी कार्यकर्ता निर्माण, पूर्णकालिक कार्यकर्ता अपेक्षित शिक्षण, प्रशिक्षण के साथ निकले, अपनी भूमिका को ध्यान में रखकर काम करे, पूर्णकालिक की योग्य दिनचर्या रहे आदि उनके आग्रह रहते थे।

उनका यथासंभव छात्र संपर्क बातचीत

संगठनात्मक उपयोगी कार्यकर्ता घर संपर्क, बहुमुखी वाचन आदि का आग्रह रहता था। अभाविप कार्य करते-करते अभाविप और कार्यकर्ता का भी व्यक्तित्व विकास अपेक्षित रहे, इसमें प्राध्यापक कार्यकर्ता का योगदान महत्व का रहता है, यह उनका विचार था। ऐसे प्राध्यापक कार्यकर्ताओं से पालक (अभिभावक) कार्यकर्ता खड़ा हो जाता है। हर स्थायी है, जिनके कारण अभाविप का छात्र प्रवाही संगठन चलता रहता है। केलकर जी की इसी प्रकार की कार्यपद्धति के अनेक अनुभव सभी के लिए उपयुक्त एवं आवश्यक है -यह सोचकर स्वर्गीय दत्तोपंत ठेंगड़ी जी ने अनेक अनुभव शब्दबद्ध करने का आग्रह किया। इससे "पूर्णांक की ओर" (माणस नामनुकाम) पुस्तक प्रकाशित हुई।

केलकर जी ने निर्णय लिया कि अभाविप कार्य अखिल भारतीय स्तर पर करना है। स्वाभाविक रूप से संघ एवं संबंधित लोगों से बातचीत की गई। विचार-विमर्श करने के बाद यशवंतराव ने खुद अभाविप का कार्य शुरू किया। पहले प्रांतशः स्वभाव धर्म के अनुसार अभाविप का काम, कार्यक्रम चलाते थे। एक मंच जैसा अभाविप का स्वरूप था। वह प्रारंभ में स्वाभाविक था। केलकर जी का आग्रह प्रथम मनुष्य ढूंढना और उसे कार्यकर्ता के रूप में तैयार करना रहा। कार्यकर्ताओं के लिए विविध प्रकार के आकर्षक कार्यक्रम उन्होंने तलाश किए। मुंबई पर ध्यान केन्द्रित किया।

मुंबई में श्री पद्मनाभ आचार्य, बाल आप्टे, मदन जी, वैशंपायन, दिलीप परांजपे आदि छात्र कार्यकर्ता खड़े हुए। उन्हें माह में दो-तीन बार महाराष्ट्र के विद्यापीठ केन्द्र और दो बड़े-बडे स्थानों पर भेजते रहे। महाराष्ट्र खड़ा हो गया। इतने में नागपुर में संघ के प्रभावी प्रचारक दत्ता जी डिंडोलकर वापस आए। अत्यंत विद्वान युवा प्रिय प्राध्यापक दत्ता जी और यशवंतराव जी जैसे दो समर्थ कंधों पर भारत के अंदर अभाविप खड़ा हुआ। उन्हें आपटे जी, मदन जी, राजजी, नारायण भाई, कोहली जी, प्रा. शेषगिरिराव, कृष्ण भट्ट जी का वर्षों तक सहयोग मिला और यही आगे के समर्थ अभाविप के विकास अध्वर्यु बने। साथ-साथ गोविंदाचार्य, राम बहादुर राय, महेश जी आदि पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं का भी अपना योगदान रहा।

केलकर जी का सर्वस्पर्शी कार्य, सामाजिक समता का अत्यधिक आग्रह रहता था। राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के संदर्भ में शिक्षा क्षेत्र में कार्य, दलगत राजनीति से ऊपर उठकर राष्ट्रीय जागरण का कार्य, सामाजिक दंडशक्ति खड़ी करने का प्रयास, रचनात्मक कार्य एवं आवश्यक हो तो प्रत्यक्ष आंदोलन आदि अभाविप के आग्रह के विचार रहे। अर्थात यह सब साध्य करना है तो व्यक्ति निर्माण आवश्यक है। आज अनेक समस्याएं हैं। परंतु इनमें भी गंभीर समस्या "मनुष्य" है। यह ध्यान में लेकर केलकर जी कार्यकर्ता-प्रशिक्षण-निर्माण पर अधिक बल देते थे। अभाविप का काम विचार, कार्यकर्ता, पैसा आदि सभी दृष्टि से आत्मनिर्भर हो, ऐसा केलकर जी का आग्रह था। अपना मूल विचार यानी संघ, यानी मूलतः भारतीय विचार चिंतन ही है। परंतु अन्य किसी बात में हम परावलंबी रहे, तो हम उन व्यक्ति या संस्था या संगठन के आश्रित हो जाते हैं। उनका ही कहना मानना पड़ता है। यह ध्यान में लेकर अपना व्यवहार सम्यक रहे। अभाविप राष्ट्रीय अधिवेशन, प्रदेश अधिवेशन, प्रदेश कार्यकारिणी गठन, बैठकें, हिसाब सदस्य सम्मेलन आदि का आग्रह रहता ही था। परंतु बाद में कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग (इकाई से राष्ट्रीय स्तर तक) प्रारंभ किए गए।

अपने ही कार्य से योग्य पद्धति से, निष्कर्षों के साथ पूर्णकालिक कार्यकर्ता निकलें और निकलते रहें, ऐसा केलकर जी का आग्रह रहता था। पूर्णकालिक पूर्ण समय देता है, ठीक काम करता है, वैसे पूर्ण समय है तो काम बिगाड़ भी सकता है। यह ध्यान में लेकर केलकर जी पूर्णकालिक संस्था के निकष, प्रशिक्षण , पूछताछ, विकास, दिनचर्या, ज्ञानोपासना, सादगी के संदर्भ में अत्यंत आग्रही थे। प्रारंभ के कई वर्ष तक पूर्णकालिक सदस्यों की बैठके माह में एक बार स्वयं लेते थे ।

मुंबई में काम कर रहे पूर्णकालिक सदस्यों की साप्ताहिक बैठक स्वयं केलकर जी लेते थे। अनेक वर्ष मुंबई कार्यालय में हर दिन शाम को वह रहते थे। कार्यालयीन काम में सहभागी होते थे। हर विषय में परिपूर्णता का आग्रह रहता था।

स्त्री-पुरूष एक मनुष्य जैसा विचार करते थे। प्रारंभ से ही मुंबई अभाविप काम में छात्रा सहभाग रहता था। छात्रा मंत्री, महिला अध्यक्ष, नियंत्रक, प्रमुख, विषय प्रस्तोता, पूर्णकालिक आदि विषय केलकर जी के ही विचार आग्रह का परिणाम है। विचार, चिंतन, मनन एवं कृति में एकता का दर्शन मैंने उनके जीवन में किया। उनके ऐसे जीवन के लिए देवरस जी ने कहा था कि-

'केलकर जी यानी प. पू. हेडगेवार कुलोत्पन्न'

उनकी आत्मा के प्रति श्रद्धांजलि। ■

(लेखक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ प्रचारक हैं। पूर्व में आप अभाविप के राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री रह चुके हैं।)

महान संगठक

■ राज कुमार भाटिया

यद्यपि अभाविप की अनौपचारिक स्थापना 1948 में और औपचारिक स्थापना 1949 में हुई परंतु यह कहना ठीक होगा कि उसका व्यवस्थित और विधिवत कार्य तब प्रारंभ हुआ, जब 1958 में प्रा. यशवंतराव केलकर ने उसमें प्रवेश किया। उसमें भी वे slow & steady तरीके से चले। पहले मुंबई और फिर महाराष्ट्र प्रदेश के काम में उन्होंने भूमिका निभाई। 1967 में जब वे परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष बने तब उन्होंने देश भर के काम में भूमिका निभाई। उनकी कार्यशैली ऐसी थी कि वे केवल एक वर्ष अध्यक्ष के पद पर रहे पर 1968 से उन्होंने परिषद का संगठनात्मक आधार बनाने में मुख्य भूमिका निभाई जब उनकी योजना से परिषद का पहला अभा अभ्यास वर्ग मुंबई में हुआ। वैसे तो उन्होंने परिषद के वैचारिक और संगठनात्मक दोनों पक्षों में ध्यान दिया परंतु उन्हें यह स्पष्टता थी कि प्रारंभ में संगठनात्मक पक्ष को वरीयता देना आवश्यक था। इसलिए 1968 से ही राष्ट्रीय, फिर क्षेत्रीय और फिर प्रांतीय अभ्यास वर्गों की श्रृंखला निर्माण करने में उन्होंने अधिक ध्यान दिया। यद्यपि वे पुनः अध्यक्ष नहीं बने पर 1970 में मा. मदनदास जी के पूर्णकालिक राष्ट्रीय संगठन मंत्री बनने के बाद उन्होंने मदनदास जी की सहायता से परिषद का अखिल भारतीय, क्षेत्रीय व प्रांतीय स्तरों पर सशक्त संगठनात्मक ढांचा निर्माण किया। 1970 का दशक परिषद के लिए कई प्रकार से महत्वपूर्ण रहा। जहां एक ओर केलकर जी के मार्गदर्शन में परिषद का संगठनात्मक ढांचा सुदृढ़ हुआ, वहीं वह दशक छात्र सक्रियता और आंदोलनों, आपात्काल व 3 लोकसभा चुनावों का दशक भी बना जिसमें परिषद को बार बार वैचारिक स्पष्टता से आगे बढ़ना पड़ा। पूरे भारत में प्रभाव निर्माण करने वाले दो आंदोलन-गुजरात का नवनिर्माण आंदोलन और बिहार का जयप्रकाश

नारायण आंदोलन उसी दशक में हुए जिनमें अभाविप की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका रही। केलकर जी ने उन आंदोलनों संबंधी अभाविप की दृष्टि और सोच बनाने में भूमिका निभाई जब परिषद ने 'छात्र आज का नागरिक है' के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। जून 1975 से फरवरी 1977 तक देश ने आपात्काल झेला जिसके विरोध में परिषद ने बढ़चढ़ कर भाग लिया। आपात्काल विरोधी सत्याग्रह में भाग लेकर केलकर जी ने कार्यकर्ताओं के सम्मुख उदाहरण प्रस्तुत किया। 1977 में परिषद के सम्मुख स्वयं के विलय की चुनौती आई जब जयप्रकाश नारायण आंदोलन में सहभागी छात्र युवा संगठनों का एक संगठन बनाने का दबाव आया। परिषद ने उस विलय को स्वीकार नहीं किया। 1978 में अभाविप ने फिलहाल छात्र

संघ चुनावों में भाग लेना छोड़ा। 1971, 1977 और 1980 में तीन लोकसभा चुनाव हुए जिनमें से 1977 व 1980 के चुनाव विशिष्ट परिस्थिति से युक्त थे जिनमें परिषद को भी एक भूमिका तय करनी पड़ी। 1981 में परिषद ने छात्र संघ चुनावों में फिर से भाग लेने का निर्णय किया। दशक में, विशेषकर 1973 से 1981 के बीच बार बार परिषद में वैचारिक स्पष्टता निर्माण करने में केलकरजी की भूमिका रही यद्यपि इस संबंध में उन्हें श्री बाल आपटे व श्री मदनदास का भी साथ मिला।

1981 के बाद वह दौर आया जब परिषद एकाग्रचित्त हो कर भविष्य की ओर बढ़ने लगी। लगभग 12-13 वर्षों में परिषद के संगठनात्मक विधि निषेध तय हो चुके थे। अब आवश्यकता थी कि अपनी वैचारिक स्पष्टता के आधार पर परिषद भविष्य की दिशा तय करे। यह सब करने में भी केलकर जी की अग्रणी भूमिका रही। 1982 में आबू में 4 दिवसीय प्रथम विचार बैठक में उनके नेतृत्व में परिषद ने सभी वैचारिक विधि निषेध तय किये। केवल एक बार ऐसा करना पर्याप्त नहीं था इसलिए चार वर्षों में एक बार विचार बैठक की श्रृंखला निर्माण हुई। केलकर जी ने 1986 की विचार बैठक में भी भूमिका निभाई। 1987 में ऐसा लगा कि एक संगठनात्मक विचार बैठक हो तो उसमें भी केलकर जी की अग्रणी भूमिका रही।

1985 में केलकर जी की आयु 60 वर्ष की हुई थी। वे अधिक देर परिषद में नहीं रहना चाहते थे इसलिए 1986 से परिषद से मुक्त होने का क्रम उन्होंने प्रारंभ किया और 1987 से पूर्णमुक्ति लेने का निर्णय किया। जहां तक परिषद का प्रश्न था 1987 में परिषद भी उन्हें मुक्त करने की स्थिति में आ गई थी परंतु ईश्वर की कोई और ही योजना थी। परिषद से मुक्ति के 6 मास पश्चात ही वे इस संसार से विदा हो गए।

केलकर जी को अभाविप के खांचे मे देखना उचित नहीं है। वे मूलतः राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के स्वयंसेवक थे। परिषद में तो लगभग 33 वर्ष की परिपक्व आयु में वे आये यद्यपि उनके जीवन के अंतिम तीन दशक परिषद में बीते। उनका सामाजिक जीवन संघ से प्रारंभ हुआ। वे सात वर्ष संघ के प्रचारक रहे, 3 वर्ष उन्होंने राजनीतिक दल जनसंघ के महाराष्ट्र प्रदेश कार्यालय के मंत्री के रूप में बिताये और एमए तक अध्ययन पूरा करने के पश्चात स्थायी प्राध्यापक बनने के बाद उनकी अभाविप यात्रा प्रारंभ हुई।

केलकर जी की गहराई किसी भी शोध विद्यार्थी के लिए भरापूरा विषय बनता है। वे आदर्शों के पुंज तो थे ही पर सामाजिक संगठनों हेतु जिन दो सिद्धांतों का प्रबल आग्रह उन्होंने किया उन्हीं के कारण अभाविप वह बन सकी जो वह आज है। और वे सिद्धांत सभी सामाजिक संगठनों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकते हैं।

प्रथम सिद्धांत के अनुसार सामाजिक संगठनों से संबंधी केलकर जी की सोच थी कि संगठन व्यक्तियों से बनते हैं और उनमें एक या दो नहीं अपितु अनेक व्यक्तियों की आवश्यकता रहती है। वे कहते थे कि व्यक्तियों में भिन्नता होना स्वाभाविक होता है और प्रायः हर व्यक्ति में गुण और दोष दोनों होते हैं। इसलिए अनेक व्यक्तियों से निर्मित होने वाले संगठन में अनेकों व्यक्तियों के गुणदोष प्रभाव डालते हैं। इसलिए वे कहते थे कि संगठनकर्ता को यह मानकर चलना चाहिए कि कार्यकर्ताओं को गुण-दोषों के साथ स्वीकार करना है और यह प्रयास करते रहना है कि कार्यकर्ता के गुणों का लाभ संगठन को हो और उसके दोष कम हों। यहीं से उनका दूसरा सिद्धांत लागू होता था और वह था Team Work। वे मानते थे कि संगठन को बड़ा बनाने के लिए विभित्र स्तरों पर कार्यकर्ताओं की teams बननी चाहिए। टीम से उनका आशय होता था कि लगभग एक ही स्तर के अनेक लोग जो एक दूसरे के पूरक बनकर संगठन का नेतृत्व करें। यह सिद्धांत मुख्यतः उनके लिए होता है जो संगठन के शीर्ष पर होते हैं। उनसे यह अभिप्रेत होता है कि वे स्वयं को first among equals समझें और टीम 5 की हो या 10 की या 20 की, सभी एक दूसरे को अपने समान समझें।

जन्मशती के अवसर पर उस महान संगठक को मेरा सादर प्रणाम। ■

(लेखक अभाविप के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं।)

Yashwant Rao Ji : The master craftsman of human organisation

Prof. P. V. Krishna Bhatta

When you look at an exquisite piece of art or architecture, the first question that comes to your mind is, who is the artist or sculptor who has created the same. Unknowingly the head bows in veneration to the creator. The same thing can be said about human organisations also.

Akihl Bharatiya Vidyarthi Parishad or ABVP for short is an organisation of the students and in fact the largest student organisation in the world. Its uniqueness lies in not only being the largest organisation in size, but because of some of its distinct features of organisational culture like commitment to the ideology of nation building, unique system of team work, collective decision making, making every worker feel that he has an important role to play in the organisational framework and so on. When we ponder over how these features of the organisational culture developed and who is the person mainly responsible for these unique features, one name that figures prominently before our mind is that of Prof. Yashwant Rao Kelkar. Of course, if anyone told Sri Yashwant Rao Kelkar that he is chiefly responsible for the development of this organisational culture he would vehemently deny it and would assert that it is the result of team work. He would often give the example of mountain climbers. While climbing the mountain the climbers tie themselves together with a rope and remind themselves that we are on the same rope and ensure that no one slips down. Every one helps every other person to stick to his position and strive to climb upwards. If ABVP has grown as a huge organisation over the years it is

mainly because of the organisational culture it has internalised.

There is a wise quotation in Sanskrit. It says

अमंत्रमक्षरं नास्ति नास्ति मूलमनौषधम् ।
अयोग्यः पुरुषो नास्ति योजकस्तत्र दुर्लभः॥

(There is no letter which cannot become part of a mantra, no herb which does not have a medicinal value, no person who is unfit for any useful work; only the planner and utiliser is difficult to find.) Prof. Yashwant Rao, I have no hesitation in saying that, possessed that magical touch which transformed every ordinary student who came in contact with him into a dedicated worker of the organisation.

Yashwant Raoji was President of ABVP for only one year in 1967. Afterwards he held no official position in the organisation. For about 25 years he was closely involved in the working of the organisation. Afterwards he used to interact with the workers, guide them, help them overcome many of the tough and tricky problems they came to encounter not only with regard to organisational work but also in their personal lives. The age difference never came between them in having the most intimate relations. Many workers of both genders would confide with him and seek his guidance in tackling many of their most personal problems. He was literally the friend, guide and philosopher to most of the younger colleagues who came into contact with him.

Often many of us working in the social field speak against the caste differences and inequalities practiced by the people in the name of caste. Yashwant Raoji did not speak much against the caste inequalities, but he set an example by his personal conduct. Any worker of the organisation or any close acquaintance had entry into his house right upto the kitchen irrespective of the caste to which he/she belonged.

On most of the things he did not speak much or give long sermons. His conduct itself was a message to the workers. Social equality is a matter of commitment for the workers of ABVP. Yashwant Raoji led from the front in this regard. During holidays he sent his son to live with the family of a so called low caste friend with whom he had a very intimate contact.

The concept of team work that has become an integral part of ABVP's work culture owes in a large measure to his contribution. The concept of team work is essentially based upon the principle, "every body is important but no one is indispensable". Taking every body into confidence, making every worker, however junior he may be, feel that he too has an important role in the organisation are the important messages communicated to the workers by his own personal conduct without talking much about it was the unique style of Yashwant Raoji.

There is a subhashita in Sanskrit regarding the qualities of noble men. It says –

गुणदोषौबुधोगृह्णन् इंदुक्ष्वेळाविवेश्वरः।
शिरसाश्लाघतेपूर्वंपरं कंठेनियच्छति॥

(Noble men accept the virtues and vices of others in the same manner as Lord Shiva accepted the moon and the poison which emerged from out of the churning of the ocean. He wears the moon on the forehead to show it to the world but hides the poison in his throat.)

I may mention a few instances relating to myself that exemplify the concern he had for fellow workers and the affection he showered on them. That was the time when the senior workers had decided that I should be made the president of the organisation. Sri Yashwant Raoji wrote to me informing the decision and that I should accept the suggestion. But I was quite hesitant to accept the big responsibility. Particularly for two reasons, one, the feeling that I did not possess the requisite ability to shoulder such a big responsibility and secondly at that time I was passing through serious problems at the

personal and family levels. So, I wrote back to Sri Yashwant Raoji pleading my inability to accept the responsibility and suggested two other names of youngsters with excellent leadership qualities. But Yashwant Raoji was not the kind of person to accept my reluctance so easily. He contacted Sri H.V. Shshadriji, Prant Pracharak of RSS at that time to advice me to accept the proposal. Sheshadriji sent me a letter saying that, it is natural and there is nothing wrong in having an opinion about one's own abilities and short comings but when other senior colleagues in the organisation come to a decision it is the quality of a sincere worker to accept their decision. I had no other go than to accept the decision of the senior colleagues. This was how Yashwant Raoji identified the workers and instilled the confidence in them that they can discharge the responsibility entrusted to them.

It was at the time of the national conference held at Hubli in 1982. I was the president at that time. Yashwant Raoji noticed that I did not have a wrist watch in my hand. Probably he felt that I needed a wrist watch while attending the programmes. In between the sessions he came to me removed the wrist watch from his hand and tied it to mine. After the conference was over he could not meet me before his departure since probably I was attending some other meeting. He left a message with Sri Madanji saying that I can send the watch with Madanji or keep it for myself as a gift from a friend. Of course I sent it back with Madanji. But this was the way he took care of the minute things relating to fellow workers.

He knew that at that time I was passing through serious financial problems because I was not getting my salary for a long time owing to some legal tussle. I had not spoken about my problem with any body, but somehow it had come to his knowledge. Once when I came to attend a meeting, before my departure he came to me and silently put one thousand rupees in my pocket. When I resisted, he said, I know that you are in difficulty. This is the little I can do for you at this moment. Don't be under any moral stress. You can return the amount whenever your difficulties are over I had to accept the offer as a blessing. I could return the amount only after a couple of years. This was how Yashwant Raoji took care of the coworkers.

Often persons deeply involved in social work find it difficult to have a harmonious balance between domestic responsibilities and organisational work. Yashwant Raoji had a key role in developing the spirit of team work and team spirit in the organisation. At

the same time he introduced the same spirit of team work in the affairs of the family as well. His wife used to say that so far as family affairs are concerned ours is a team, the motto of which was one for all and all for one.

This is a brief account of how Sri Yashwant Raoji guided, moulded and inspired the workers of ABVP by his personal conduct and example. If ABVP has been able to acquire a distinct organisational culture, there is absolutely no doubt that it owes to a large extent to the role played by Sri Yashwant Raoji. ■

(The author is former President of ABVP and Chancellor of Central University of Odisha.)

अनामिकता की प्रतिमूर्ति यशवंतराव जी

■ गीता गुंडे

सामूहिकता यह भारतवर्ष की परम्परा रही है। इतना ही नहीं, यह तो हमारे जीवन का वैचारिक आधार है। सामूहिकता का अनुभव हम घर में, समाज में तथा संगठन के माध्यम से करते हैं। हमारे समाज में ग्रामों का कार्य भी ग्राम पंचायत के माध्यम से चलता था। स्वर्गीय धर्मपाल जी की "Beautiful tree" पुस्तक में इसके निर्देश हैं कि महिलाओं की भी सहभागिता रहती थी। कुंभ, महाकुंभ में भी विद्वानों का विचार उनके तात्कालिक परिस्थिति के अनुसार तथा मूल विचार का विचार-विमर्श होता था। यह विचार-विमर्श का आधार स्थानीय से राष्ट्रीय स्तर पर तथा विचार राष्ट्रीय से स्थानीय स्तर तक आता-जाता था।

सामूहिकता का आधार संगठन है। विचारों को समाज में पहुंचाने का माध्यम संगठन है। महाराष्ट्र के संत स्वामी समर्थ रामदास ने आक्रमणकारियों के विरोध में वातावरण बनाने का काम संगठन बनाकर ही किया। एक आधुनिक काल में भी उपयुक्त ऐसा संगठन शास्त्र उन्होंने अपने ग्रंथों के, विशेषतः दासबोध के माध्यम से 350-400 वर्ष पूर्व ही लिखा तथा व्यवहार में लाया था।

इसी परंपरा में आधुनिक काल में स्वर्गीय यशवंतराव केलकर जी ने संगठन कैसे गठित करना है? इसका उदाहरण विद्यार्थियों में संगठन खड़ा करके प्रस्तुत किया। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद संगठन को खड़ा करने में उनका महत्वपूर्ण योगदान है। अभाविप की सैद्धांतिक भूमिका, कार्य पद्धति आदि विशेष विषयों के साथ दूरदृष्टि का अनुभव भी उनके विचारों में रहा है ।

सामूहिकता एवं अनामिकता का उदाहरण उन्होंने स्वयं के जीवन से हमारे सामने रखा। अभाविप के तीस वर्ष के कार्यकाल में केवल एक वर्ष वह राष्ट्रीय अध्यक्ष रहे। मुंबई में प्राध्यापक तथा गृहस्थी का दायित्व संभालते हुए एक अखिल भारतीय संगठन खड़ा होने में उनकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण रही और उनकी मृत्यु के पश्चात् आज भी उनका जीवन सभी कार्यकर्ताओं को प्रेरणा देता है ।

यह वर्ष उनका जन्मशताब्दी वर्ष है। हमारे लिए स्वाभाविक है कि उनके कई संस्मरण याद आते हैं।

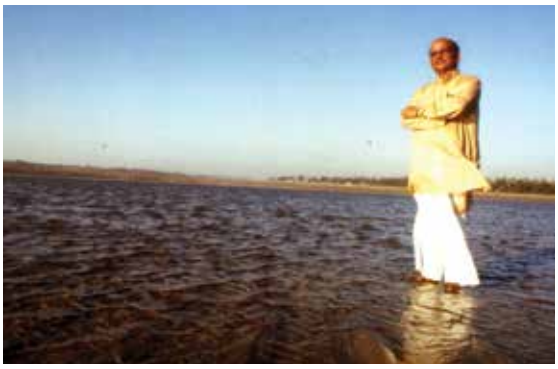

यशवंतराव जी कहते थे कि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण कार्य करना यानी व्यक्ति निर्माण करना। समाज परिवर्तन करना है तो व्यक्तियों में राष्ट्रप्रेम, सामाजिक संवेदना और व्यक्ति का चारित्र्य इन गुणों का संवर्धन करना आवश्यक है और इसका माध्यम संगठन है।

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे उनका सान्निध्य, प्रेरणा एवं मार्गदर्शन मिला। मैंने जब अभाविप में आना शुरू किया था, उस वर्ष मुंबई महानगर का अभ्यास वर्ग था। उस समय की उनकी मूर्ति हंसमुख, स्वागतशील भाव आज भी मुझे याद आते हैं और ऐसे वह हमेशा ही रहते थे। एक प्राध्यापक हमारे जैसे कालेज विद्यार्थियों का स्वागत स्वयं हर्षपूर्वक कर रहे थे, यह अनुभव करके आश्चर्य हो रहा था। सहजता से कार्यकर्ता विकास कैसे करना हैं? यह उनके साथ कई बार अनुभव हुआ। ऐसा ही एक अभ्यास वर्ग चल रहा था। भोजन के समय कार्यकर्ता पंक्ति में भोजन के लिए बैठे थे। उन्होंने मुझसे कहा कि आप अगली पंक्ति में भोजन करिए और वह भी मेरे साथ ही खड़े रहे। फिर उन्होंने कहा कि यहां बैठे हुए कार्यकर्ताओं का नाम बताना होगा। बाद में ध्यान में आया कि ऐसे कार्यक्रम में अपना सबसे संपर्क होना चाहिए। वह कार्यकर्ता को सौपा हुआ काम, उसका आकलन भी बहुत अच्छी तरह से बताते थे। एक कार्यकर्ता का पहली बार बड़ी सभा में भाषण हुआ था। सभी ने कहा कि अच्छा हुआ। लेकिन यशवंतराव जी ने कहा कि 70 प्रतिशत ठीक हुआ।

मुझे लगता है कि कार्यकर्ता विकास केवल भाषण से नहीं, बल्कि ऐसे छोटे-छोटे अनुभव से होता है। व्यक्ति निर्माण में कार्यकर्ता का विकास बहुत ही महत्वपूर्ण होता है ।

यशवंतराव जी व्यक्ति के सुख-दुख में समरस होते थे। फिर वह परिषद कार्यकर्ता हो या उनके महाविद्यालय में पढ़ने वाला विद्यार्थी या कर्मचारी। उनके महाविद्यालय के प्राध्यापकों से उनका, फिर वह किसी भी विचारधारा के हो, अच्छा स्नेहबंध था। उनके एकषष्ठी के कार्यक्रम के समय उनकी सहयोगी प्राध्यापिका श्रीमती चंपा लिमये उपस्थित थीं जो समर्पित समाजवादी कार्यकर्ता थी। उन्होंने यशवंतराव जी के बारे में लिखा था कि वह हमारे स्नेही तो थे और कठिन समय में भी उनका हमें सहयोग और मार्गदर्शन मिलता था। उनके सेवानिवृत्ति के समय महाविद्यालय के कार्यक्रम में एक कर्मचारी ने कहा कि अब हर समय हमारे साथ रहने वाला पालक महाविद्यालय में कोई नहीं रहा। मुंबई में उनके एकषष्ठी के सम्मान कार्यक्रम में मुस्लिम विद्यार्थियों ने अपने अनुभव बताए। विद्यार्थी परिषद में कार्यरत कार्यकर्ता के बारे में तो ऐसे कई उदाहरण देखने को मिलते है, जिनके जीवन और जीवन दृष्टि में भी परिवर्तन आया। उनका कहना था कि व्यक्तिगत जीवन में ऊंचाई तक पहुंचना, यशस्वी होना महत्वपूर्ण है लेकिन सामाजिक कार्य में भी अधिक से अधिक तथा लंबे समय तक काम करना चाहिए। सोच छोटी नहीं होनी चाहिए एवं हमारा जीवन राष्ट्र कार्य के लिए होना चाहिए। अपने स्वयं के जीवन से हमलोगों के बीच कई उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। वह मुंबई के नेशनल कालेज में पढ़ाते थे। वहां उप-प्राचार्य भी रहे लेकिन उन्होंने प्राचार्य पद लेने से इंकार किया क्योंकि उस जिम्मेदारी का निर्वाह करते हुए उनके सामाजिक कार्य पर प्रभाव पड़ता था।

घर में आने वाले कार्यकर्ता को वह हमेशा भाभी जी से मिलकर जाने के लिए कहते थे। शशीकला भाभी जी भी अंग्रेजी की प्राध्यापिका थी। उनसे मेरी अच्छी गपशप होती थी। कई विषयों पर चर्चा होती थी तथा मार्गदर्शन भी मिलता था। उन्होंने अपने लेख में लिखा था कि हमारी (परिवार की) भी एक 'टीम'है। वह कहती थी कि घर के बारे में हम सब मिलकर निर्णय लेते थे। उनके बच्चे छोटे थे तभी से यह प्रथा थी। घर में आने वाले व्यक्ति के साथ परिवार सदस्य जैसा ही व्यवहार करते थे। मैं उनके घर गई थी। दिवाली की पूर्व तैयारी घर में चल रही थी। घर में नमकीन, मीठा इत्यादि सब बनता था। इन सबको बनाने के लिए वह सब इकट्ठा काम कर रहे थे, यशवंतराव जी ने मुझे कहा कि आओ गीता, हमारे साथ बैठो। इतनी सहजता से उनका व्यवहार था। ऐसा ही एक अनुभव मुझे उनके गृहस्थी जीवन से मिला। उनके घर के पास बाजार में मेरी उनसे भेंट हुई। भाभी जी साथ में थी और दोनों के हाथों में सब्जियों की थैलियां थी। उन्होंने कहा सप्ताह में एक दिन हम दोनों मिलकर बाजार में जाते हैं। इतना बड़ा व्यक्तित्व घर में सहजता से घर के कामों को भी महत्व देता है यह देखकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ।

वह कार्यकर्ता के सुख-दुख में समरस रहते थे। दो उदाहरण देना में उचित समझती हूं। एक मिल मजदूर का बेटा मुंबई के परेल मिल मजदूर बस्ती में रहने वाले रवि पवार की शादी होनी थी और उसी दिन 'मुंबई बंद' का ऐलान था। उस समय 'मुंबई बंद' यानी पूरा बंद रहता था। टैक्सी, बस, निजी वाहन कुछ भी उपलब्ध नहीं था। विवाह का स्थान रवि जी के घर से दो-तीन किलोमीटर की दूरी पर था। यशवंतराव जी माहिम स्थित घर से परेल तक उनके घर पैदल गए और बारातियों के साथ विवाह स्थान पर गए। विवाह के लिए ले जाने वाला सामान भी सबको हाथ में ही लेकर जाना पड़ा था। यशवंतराव जी अपने हाथ में रवि जी के जूते लेकर गए थे। रवि जी ने अपने व्यक्तिगत जीवन के साथ संघ कार्य में ही अंतिम समय तक कार्य किया। नौकरी करने के बाद यशवंतराव जी ने उनको बहुजन समाज में संघ कार्य करने के लिए कहा, जिसका पालन उन्होंने किया।

एक पूर्णकालिक छात्रा कार्यकर्ता का एक उदाहरण है। वह मुंबई में घर में रहते हुए पूर्णकालिक काम कर रही थी। एक दिन उसने संगठन मंत्री को कहा कि मेरी मां बीमार है, तो मैं दोपहर तक कार्यालय में आऊंगी। यशवंतराव जी तक यह बात पहुंची। वह कार्यकर्ता जब दोपहर कार्यालय पहुंची तब यशवंतराव जी अकेले ही कार्यालय में बैठे थे। उन्होंने कहा कि तुम्हारी राह देख रहा था और मां की तबीयत के बारे में पूछा। उस समय उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। घर में और समाज में महिला का सम्मान होना चाहिए, यह उनका आग्रह था और उसको उन्होंने अपने व्यक्तिगत, सामाजिक जीवन में व्यवहार के माध्यम से लाया था। सामाजिक संवेदनशीलता जागृत करना, समाज में कुरीतियों को दूर करना, इसका विचार वह रखते थे। उसी संदर्भ में वह स्त्री-पुरुष समानता के आग्रही थे। उनकी सुधार की कल्पना Aggressive नहीं थीं। बल्कि समूह को साथ लेकर जाने

की क्षमता उत्पन्न करने वाली थी। इसीलिए वह धैर्य से आगे ले जाते थे। जल्दबाजी नहीं करते थे।

अभाविप में विद्यार्थियों के साथ विद्यार्थिनी का काम एवं सहभाग विकसित करते समय वह समाज की मनस्थिति का, अपनी परिस्थिति का आकलन करते हुए आगे बढ़ने का विचार रखते थे। 1967 में एक छात्रा ने पूर्णकालिक निकलने की इच्छा व्यक्त की। उस समय उन्होंने उसको समझाया कि अभी सामाजिक अनुकूलता नहीं है, लेकिन आपकी क्षमता निश्चित है। बाद में 1976 में एक कार्यकर्ती को घर में रहते हुए पूर्णकालिक निकलने की अनुमति दी। आज देशभर में सभी प्रांतों से छात्राएं पूर्णकालिक निकल रही है। उन्होंने छात्रा कार्य के संबंध में कहा था कि छात्राएं केवल छात्राओं का काम करेंगी ऐसा नहीं है। वह सभी छात्र-छात्राओं का काम करेंगी, प्रमुख भी बनेंगी।

1980 के आसपास समाज में महिला स्वातंत्र्य की चर्चा चल रही थी। उस समय 1985 में उन्होंने अहमदनगर (अब अहिल्यानगर) के प्रांत अभ्यास वर्ग में "स्त्री-स्वातंत्र्य का प्रश्न" यह विषय रखा था। स्त्री मुक्ति नहीं-स्त्रियों के प्रश्न केवल स्त्रियों के नहीं, समाज के प्रश्न हैं। पाश्चात्य विचारधारा में स्त्री विरुद्ध पुरुष ऐसा विचार रहता था। उन्होंने कहा कि स्त्री विरुद्ध पुरुष ऐसा वर्ग संघर्ष का विषय नहीं। स्त्री एवं पुरुष समाज में समान दर्जा के नागरिक हैं। महिला केवल उपभोग्य वस्तु नहीं है, वह तो बराबरी में सामाजिक सहभाग रखने वाली नागरिक है।

यशवंतराव जी कहते थे कि अभाविप से निकले कार्यकर्ता आगे जाकर जीवन के विविध क्षेत्र में सक्रिय रहेंगे। महिला क्षेत्र में पूर्व छात्रा कार्यकर्ता तथा अन्य- समविचारी महिलाओं ने मिलकर 'भारतीय स्त्री शक्ति' यह संगठन शुरू किया। उसमें परिषद की पूर्व छात्रा कार्यकर्ता अग्रणी हैं और भारतीय दृष्टिकोण में महिला इस विचार से समाज को प्रभावित कर रहीं हैं। यशवंतराव जी ने जो महिला विषय समान सहभागिता का विचार रखा और विद्यार्थी परिषद में व्यवहार में लाया, वह आज गति से आगे बढ़ रहा है।

यशवंतराव जी को केवल अभाविप में ही नहीं, संघ परिवार में भी उन्हें सम्मान मिला। उनके निधन के बाद स्वर्गीय दत्तोपंत ठेंगड़ी जी ने कहा था कि यशवंतराव जैसा कोई और एक नहीं हो सकता है। अभाविप टोली कार्यकर्ताओं से उन्होंने कहा कि आप सबको मिलकर यशवंतराव बनना होगा।

महाराष्ट्र में कभी उनका समाचार पत्रों में नाम नहीं रहता था। उस समय महाराष्ट्र में अभाविप का काम था, लेकिन प्रसिद्धि नहीं मिलती थी। 1985-86 में प्रा. यशवंतराव जी के षष्टिपूर्ति के कार्यक्रम महाराष्ट्र (विदर्भ छोडकर) में हर जिले में हुए थे। एक जिले में वहां के विधायक जो राष्ट्रवादी कांग्रेस के थे, उनको प्रमुख अतिथि के रूप में निमंत्रित करने अभाविप कार्यकर्ता गए। उन्होंने कहा कि मैं बताता हूं। बाद में वह कार्यक्रम में आए और भाषण में कहा कि अभाविप के कार्यक्रम में रहना पार्टी को उचित लगेगा या नहीं, वह इस संभ्रम में थे। उन्होंने शरद पवार जी से पूछा कि क्या करना चाहिए? इस पर उन्होंने कहा कि यशवंतराव जी के सम्मान कार्यक्रम में अवश्य जाए। संगठनकुशल, चारित्र्यवान व्यक्ति हैं, उनका आदर करना चाहिए। एक प्रकार से समाचार पत्रों में जानकारी न होने के बावजूद समाज में वह जाने जाते थे। वैचारिक मतभेद दूर रखते हुए उनके षष्टिपूर्ति कार्यक्रम में समाजवादी कार्यकर्ता प्रा. मे. पु. रेगे प्रमुख अतिथि बने। समाजवादी सहयोगी प्राध्यापकों से उनकी अच्छी मित्रता थी।

यशवंतराव जी के विचार और व्यवहार में अंतर नहीं था, यह हम अनुभव करते है और आज भी समय-समय पर यादें आती हैं । सब यहां लिखना संभव भी नहीं, उचित भी नहीं, उन्होंने समय समय पर किया मार्गदर्शन आज भी हम को कुछ सिखाते हैं तथा प्रेरणा देते रहते हैं। अंत में मैं शरदमणि मराठे की कविता से समापन करती हूं।

जब एक भुट्टा...
मोतियों जैसा दानों से
लबालब भरा हुआ
हवा के साथ हिलोरता है...
उस के लिए
पसीनों के सैंकड़ों मोती
टपके होते हैं,
यशवंत जैसा एक
अस्सल मोती का दाना
अपने आप को गाडकर
भूमि की गहरी कोख में,
शत-शत नए दानों को
जन्म देकर
कृतार्थ होता है...
सहज भाव से... ■

(लेखिका, अभाविप की पूर्व राष्ट्रीय उपाध्यक्ष है।)

‘टीम’ कार्यपद्धति के प्रतिपादक यशवंतराव केलकर

■ डा. महेश चन्द्र शर्मा

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) के कार्य से जुड़े कई पड़ाव हैं। प्रारम्भिक दो दशकों का कार्य विशेष परिस्थिति का था। 1970 के बाद अभाविप के कार्य में विशेष गंभीरता आई, जब श्री दत्ताजी डिडोलकर, आचार्य गिरिराज किशोर, श्री नारायण भाई भंडारी तथा श्री यशवंतराव केलकर परिषद कार्य में आए।

अभाविप पुनर्निर्माण के संदर्भ में शिक्षा परिवार विश्वासी छात्र संगठन है। आज का विद्यार्थी आज का ही नागरिक है। यह छात्र संगठन ट्रेड यूनियन नहीं है, न ही राजनीतिक दल का अनुषांगिक संगठन है। छात्रों एवं अध्यापकों के सांझे नेतृत्व से संचालित यह शिक्षा परिवार का गैर राजनीतिक छात्र संगठन है। यह कुछ अवधारणायें थीं, जिनके आधार पर अभाविप नए तेवर के साथ शैक्षिक परिसरों को गतिशील बना रही थी।

श्री यशवंतराव केलकर इस नवीन पड़ाव के नायक बने। ‘नायक’ शब्द से जो चित्र उभरता है, वह चित्र यशवंतराव का नहीं था। एक ऐसा नायक जो ऊपर से दिखाई नहीं देता, लेकिन संपूर्ण संगठन में परिव्याप्त रहता है। एक गृहस्थ एवं प्राध्यापक रहते हुए यशवंतराव ने अभाविप को गढ़ा। आपातकाल का संघर्ष एक संक्रांतिकाल था। गुजरात एवं बिहार आंदोलन में अभाविप अग्रणी दस्ते में थी। बाबू जयप्रकाश नारायण के विश्वस्त कार्यकर्ताओं के रूप में तब श्री रामबहादुर राय एवं श्री गोविंदाचार्य का नाम देश ने जाना। आपातकाल के विरुद्ध सत्याग्रह में भी अभाविप अग्रणी छात्र संगठन था। श्री यशवंतराव एक समर्थ अखिल भारतीय टीम की संरचना कर रहे थे। आपातकाल के बाद श्री मदनदास एवं श्री बाल आपटे अभाविप के यशवंत प्रणीत प्रथम अखिल भारतीय कार्यकर्ता थे। यशवंत-मदन-बाल की यह त्रयी आगामी दो दशकों तक अभाविप को निखारती रही।

अभाविप तो विद्यार्थियों का संगठन है, विद्यार्थी एक प्रवाही समुदाय है। अधिकतम आठ-दस वर्ष व्यक्ति अभाविप में विद्यार्थी के नाते रहता है। शिक्षा परिवार के विश्वास के कारण प्राध्यापक भी मंच पर रहते हैं। लेकिन अभाविप जिस विचार का संगठन है, वह तो जीवन पर्यंत करने का काम है। भविष्य के राष्ट्रार्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं को गढ़ने का कार्य यशवंतराव के नेतृत्व में अभाविप ने किया।

अभ्यास वर्गों एवं सम्मेलनों की विशिष्ट परंपरा प्रारंभ हुई। विशिष्ट परंपरा का अर्थ है कि यह केवल कर्मकांडीय कार्यक्रम न बने। तैयारी बैठक, समग्रता का विचार, कार्य का समुचित वितरण, कार्यक्रम का सुसंचालन, समुचित कार्यान्वयन एवं समीक्षा बैठकों का सार्थक प्रशिक्षण प्रारंभ हुआ। मिलना, बातचीत करना, विमर्श करना तथा निर्णय करना एक प्रक्रिया है। इसका यदि समुचित प्रशिक्षण न हो तो पहले व्यक्ति को लगता है मैंने बात-चीत कर ली लेकिन दूसरे को इसका समुचित अहसास ही नहीं होता। अतः बात-चीत करना क्या होता है? यशवंतराव इसको समझाते थे।

‘टीम’ एक अद्भुत अवधारणा है। टीम कुछ लोगों का गणितीय समूह नहीं, वरन एक रासायनिक सामूहिकता है। इसके लिए मनुष्य तत्व को सावधानी से सम्भालना होता है। उत्साहपूर्वक काम करना लेकिन असावधानीपूर्वक नहीं। निर्णय प्रक्रिया में टीम भावना अनाहत रहे तथा यथासमय संगत निर्णय हो जाए। असहमतियों से व्यवहार करना एक मनोवैज्ञानिक कला है। जब असहमतियों के कारण किसी की नियत पर शंका होती है तब टीम आहत हो जाती है। जब असहमत व्यक्ति अपने सहयोगियों की बात का अनादर करता है, तब भी टीम आहत हो जाती है। सतत चलनेवाली सक्रिय एवं साहसिक टीम ही किसी जीवंत संगठन का नेतृत्व कर सकती है। यशवंतराव की बड़ी देन है, ‘टीम’ कार्यपद्धति। उसकी यशस्विता भी आज साफ दिखाई देती है। आज समाज जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है, जहां विद्यार्थी परिषद की इस टीम में सुदीक्षित कार्यकर्ता महत्वपूर्ण भूमिका न निभा रहे हो। श्रद्धेय यशवंतराव केलकर की पावन स्मृति को प्रणाम। ■

(लेखक एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान के अध्यक्ष हैं।)

यशवंत जन्मशती का संदेश

■ अरुण करमरकर

इस वर्ष अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) के ज्येष्ठ कार्यकर्ता यशवंतराव केलकर जी की जन्मशती देशभर मे मनाई जा रही है। अभाविप का कार्य अब पचहत्तर वर्ष का हो चुका है। राष्ट्रीय संस्कार से प्रेरित युवाशक्ति संगठित करने के उद्देश्य से शैक्षिक परिवर्तन का तथा उस परिवर्तन की प्रक्रिया में समूचे राष्ट्र के पुनर्निर्माण का दृष्टिकोण संभालते हुए नित्य कार्यरत छात्र संगठन- यह अब अभाविप की पहचान बनी हुई है। एक विशुद्ध छात्र संगठन के रूप में अभाविप को ढालने का सार्थक प्रयास करने वाले कार्यकर्ताओं की पंक्ति में प्रा. यशवंतराव केलकर जी का स्थान अग्रसर रहा है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक के रूप में लगभग दस वर्ष कार्य करने के पश्चात आपने अपने जीवन के अंत तक- लगभग 27 वर्षों तक अभाविप के संगठन कार्य की कमान संभाली।

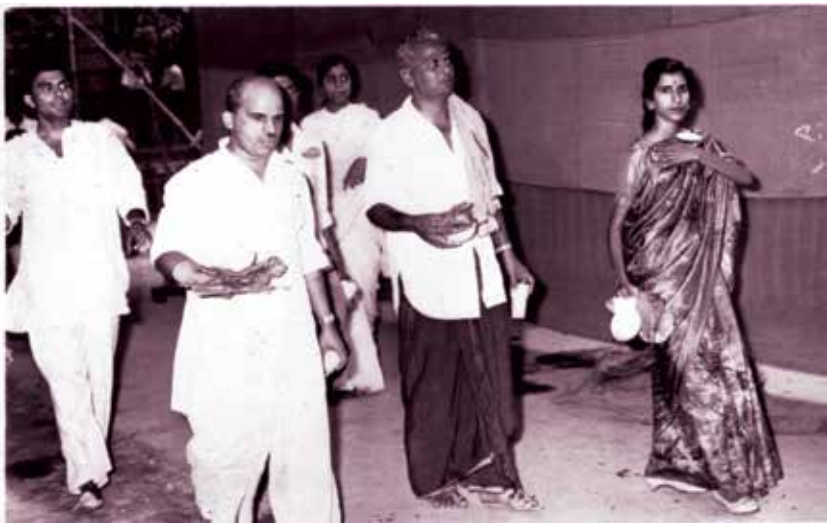

उनके इस लंबे कार्यकाल तथा संगठन में उनके योगदान की विशेषताएं क्या हैं? सबसे पहली बात यशवंतरावजी ने अपने कार्य का मुख्य लक्ष्य रखा, संगठन की मजबूती। केवल संख्यात्मक या भौगोलिक विस्तार की मजबूती नहीं, अपितु वैचारिक स्पष्टता एवं दृढता, निरंतर कार्यशीलता तथा अपने उद्देश्य के प्रति दृढनिष्ठा- यह संगठन की प्राथमिकता रहे। इसकी ओर आपने सदैव प्रयास किए। सहयोगी युवा कार्यकर्ताओं के साथ गहरा विचार-विमर्श करते हुए अभाविप की सैद्धांतिक भूमिका को आपने सिद्ध कराया। मनुष्य व्यवहार और आपसी संबंधों के बारे में गहरे अध्ययन पर आधारित कार्यकर्ता के व्यक्तित्व विकास की विशिष्ट संरचना, अभाविप के नित्य कार्य तथा कार्यक्रम का अटूट हिस्सा बने, इसकी ओर उन्होंने ध्यान दिया। अद्भुत बात यह थी कि प्रत्येक कार्यकर्ता के व्यक्तित्व का विचार करते हुए ही आपने सामूहिकता, पारस्परिकता तथा अनामिकता की मानसिकता विकसित करने पर बल दिया। इसी दृष्टि से आपने संगठन की कार्य पद्धति को परिश्रमपूर्वक विकसित किया।

संवैधानिक औपचारिकता और तांत्रिकता को सार्थक बनाने वाली निर्णय प्रक्रिया, व्यक्ति से संगठन और संगठन से देश/समाज श्रेष्ठ- इस विचार को संपूर्ण व्यावहारिकता प्रदान करने वाले प्रबोधन की व्यवस्था, कार्यकर्ता के व्यक्तित्व विकास का व्यापक विचार, सामूहिकता, सर्वस्पर्शिता, रचनात्मकता, समरसता, मित्रता को बढावा देने वाला संगठन व्यवहार, नियोजन कुशलता, वैचारिक प्रतिबद्धता आदि विषयों को मूल्य तथा निष्ठा का स्वरूप देने वाली वैशिष्ट्यपूर्ण कार्यपद्धति के बीज आपने अभाविप संगठन में दृढता से बोए। शायद सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि इन सब मूल्यस्वरूप

आग्रह को वह स्वयं अपने नित्य व्यवहार में उतारकर कार्यकर्ताओं के सन्मुख आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करते रहे।

पद, प्रतिष्ठा, निजी मान-सम्मान तथा गौरव को यशवंतराव जी सदैव टालते रहे। आयु के साठ वर्ष पूरे होने के निमित्त सार्वजनिक गौरव के कार्यक्रम को अनुमति आपने तभी दी, जब उस कार्यक्रम तथा निधि संकलन का पूर्ण उपयोग संगठन की व्यवस्था और दृढता के लिए करने का आश्वासन उनके सहयोगी कार्यकर्ताओं ने दिया। महाराष्ट्र के सभी जिलों में तथा दिल्ली, बेंगलुरु जैसे अन्य प्रांतों के कुछ प्रमुख स्थानों पर उनके गौरव के समारोह हुए। उन सारे कार्यक्रमों में गौरव स्वीकारते हुए यशवंतरावजी ने जो भाषण दिए, वह अभाविप कार्यकर्ता को सदैव दिशादर्शन का पाथेय देने वाले थे। भाषणों में आपने कहा था कि इस निमित्त से मैं अभाविप की ओर से देश और समाज को कुछ आश्वासन देना चाहता हूं। समाज में सार्वजनिक व्यवहार में उक्ति और कृति, विचार और व्यवहार में अंतर न रहे, इसका प्रयास हम करेंगे। अगर यह अंतर मिट जाए, तो समाज जीवन में विद्यमान समस्याओं में से अधिकांश समस्या अपने आप समाप्त होगी, यह उनका विश्वास था। साथ ही समाज जीवन के हर एक क्षेत्र में सक्षम तथा राष्ट्रहितरत नेतृत्व देने वाले युवा कार्यकर्ता विकसित करने का हर संभव प्रयास अभाविप निरंतर करती रहेगी।

अपने दिए हुए इन आश्वासनों के माध्यम से अभाविप की हर पीढ़ी के कार्यकर्ताओं के लिए एक शाश्वत संदेश तो दिया ही है तथा इस संदेश के रूप में एक अत्यंत महत्वपूर्ण दायित्व भी सौंपा गया। अभाविप का कार्य करते करते जिस विशिष्ट मानसिकता का संस्कार कार्यकर्ता ग्रहण करते हैं, उसके परिणामस्वरूप उन्हें एक विशेष जीवनदृष्टि प्राप्त हो और शिक्षा पूर्ण करने के बाद अपना सारा निजी जीवन उसी दिव्य जीवनदृष्टि के प्रकाश में वह जिए, यही उनकी अपेक्षा थी। छात्रावस्था के छोटे, पांच-छह वर्षों के कार्यकाल तक कार्यकर्ता अभाविप कार्य में सक्रिय रहता है। किंतु उस छोटे सी कालावधि में भी अभाविप कार्य के परिणामस्वरूप जो संस्कार तथा जीवन विषयक दृष्टिकोण स्त्री-पुरुष कार्यकर्ता तक पहुंचता है, उसी दृष्टिकोण, संस्कार एवं परिवर्तन सूत्रों को वह जीवनभर निभाए, यह उनकी अपेक्षा रही। इस प्रकार से राष्ट्रभक्ति और सामाजिक शुद्धता का संकल्प निभाने वाले कार्यकर्ता आगे चलकर समाज जीवन के हर क्षेत्र को सात्विक और समर्थ नेतृत्व प्रदान करेंगे। इसी भाव से अभाविप में 'छात्रशक्ति-राष्ट्रशक्ति' का नारा बुलंद किया जाता है। युवावस्था के कारण निसर्गतः प्राप्त हुई गुण-संपदा को विकसित करने की सांगठनिक संरचना अभाविप की रचना में बनी रहे और उससे संस्कारित और संगठित छात्रशक्ति को राष्ट्र निर्माण के कार्य मे संयोजित किया जाए, यह उस घोषणा का या नारे का भावार्थ है और यही है यशवंतराव केलकर जी के मार्गदर्शन का संकेत।

आज हम देखते है कि अभाविप के पूर्व कार्यकर्ता समाज जीवन के सभी क्षेत्र में प्रमुख स्थानों में सक्रिय हैं। राष्ट्रीय राजनीति में तो कई कार्यकर्ता नेतृत्व के स्थानों पर काम कर ही रहे है, किंतु शिक्षा, कला-साहित्य, सेवाकार्य, राष्ट्रभक्ति जागरण, संस्कार आदि अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र में भी वह ठोस कार्य करते हुए दिखाई दे रहे हैं। ऐसे कार्यकर्ताओं की संख्या और अधिक मात्रा में बढे, इसकी प्रबल आवश्यकता आज के सामाजिक वातावरण में महसूस होती है, यह भी ध्यान में रखना होगा। देश की सुरक्षा, संस्कृति जागरण, एकात्मता, पर्यावरण आदि क्षेत्र में जटिल समस्या आज भी विद्यमान है। विघटनकारी प्रवृत्ति सामाजिक सामंजस्य में बाधा निर्माण करने का भरसक प्रयास कर रही है। देश और समाज की वैचारिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक विरासत और वैभव के बारे में बुद्धिभ्रम निर्माण करने के प्रयास भी जोरों पर हैं। यशवंतरावजी कहते थे, देश, काल, परिस्थिति और अपनी शक्ति का सम्यक विचार करते हुए धैर्य और संयम के साथ अपने उद्दिष्ट (राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का ध्येय) की ओर समझदारी से बढते रहना है...।

आज यशवंतराव केलकर जी का जन्मशती वर्ष मनाते हुए उनका मार्गदर्शन और संदेश सदैव ध्यान में रख कर चलना, यह समय की पुकार है। अपने कालसिद्ध विचार और ध्येयवादिता पर अडिग रहकर, स्थिर चित्त से छात्रशक्ति को राष्ट्रकार्य में संयोजित करने के प्रयासों में यशवंतरावजी का स्मरण अभाविप तथा सभी राष्ट्रभक्त कार्यकर्ताओं को सदैव प्रेरित करता रहेगा। ■

(लेखक अभाविप महाराष्ट्र के पूर्व प्रांत संगठन मंत्री है।)

पूर्व योजना-पूर्ण योजना के प्रतिपादक प्रा. यशवंतराव केलकर

स्वाधीनता के एक वर्ष बाद 1948 में स्वर्णिम भारत की संकल्पना को केन्द्र में रखकर युवाओं के ऊर्जा का नियोजन कर उसे उचित दिशा देने के उद्देश्य से अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) का कार्य प्रारम्भ हुआ। 1948-49 में अभाविप ने जो बीज बोया था, वह आज विशाल वट वृक्ष का आकार लेकर विश्व के सबसे बड़े छात्र संगठन के रूप में स्थापित हो चुका है। 1948 में राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का ध्येय लेकर परिषद की यात्रा आरंभ हुई, लेकिन अखिल भारतीय स्तर पर खड़ी तब हुई, जब प्रा. यशवंतराव केलकर रूप में अभाविप को शिल्पकार मिला।

अभाविप को खड़ा करने में अनेकानेक कार्यकर्ताओं का योगदान है, लेकिन प्रा. केलकर का योगदान उल्लेखनीय है। उन्होंने ही अभाविप को अखिल भारतीय स्तर ले जाने की रूपरेखा तैयार की। अपने अथक परिश्रम से उन्होंने अभाविप में एक ऐसी कार्यशैली विकसित की, जिसका अनुसरण करते हुए आज अभाविप का कार्य निरंतर प्रगति के पथ पर है।

स्व. यशवन्तराव जी केलकर का जन्म अपने पैतृक स्थान पंढरपुर जिला सोलापुर (महाराष्ट्र) में 25 अप्रैल 1925 ई. को हुआ। उनके पिता का नाम वासुदेव राव, और उनके चार भाई जनार्दन, सर्वोत्तम, महाराज और वसन्त तथा एक बहन दुर्गा थी, जिनका बचपन में ही निधन हो गया था। बालक यशवन्त बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के धनी एवं सदा प्रसन्नचित रहने वाला था। तीसरी कक्षा से ही उन्हें प्रतिभा छात्रवृत्ति मिलने लगी थी। पंढरपुर नगरपालिका की मराठी पाठशाला में पूर्व प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने कक्षा एक से पांच तक ही शिक्षा

पंढरपुर के वी.जे. हाईस्कूल (लोकमान्य विद्यालय) में पूर्ण की। छठी और सातवीं कक्षा के लिए उन्होंने राम मोहन हाईस्कूल (मुंबई) में प्रवेश किया। उसी वर्ष वह अपनी कक्षा के प्रमुख (मॉनिटर) बन गए और फिर वह विद्यार्थी ग्रंथालय के व्यवस्थापक भी बने। मैट्रिक परीक्षा में उन्हें 73 प्रतिशत अंक मिले। अंग्रेजी, गणित, संस्कृत एवं मराठी विषयों में विशेष योग्यता के साथ संस्कृत विषय की छात्रवृति भी उन्हें मिली।

1941 में उन्होंने पुणे स्थित विख्यात महाविद्यालय एस. पी. कालेज में उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए कला संकाय में दाखिला लिया। उन्हें महाविद्यालय के प्राध्यापक श्री. म. माटे जैसे सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं समाजसेवी का सुखद सान्निध्य प्राप्त हुआ। जहां एक ओर यशवन्त का महाविद्यालयीन छात्र जीवन विकसित हो रहा था, वहीं दूसरी ओर वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को भी समझ रहे थे। तत्कालीन राजनीतिक एवं सामाजिक विचार प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन और विचार मंथन करने के पश्चात उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा में जाना शुरू कर दिया। वह पुणे स्थित 'रामदास' संघ शाखा में नियमित रूप से जाने लगे।

1942 के जन आंदोलन का उत्तरार्ध शुरू होने पर उनका समय महाविद्यालय और उसके बाहर विविध उपक्रमों में बीतने लगा। पुणे नगर में आयोजित सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं से सम्बन्धित चर्चा, सत्रों और व्याख्यानों में यशवन्त जी की उपस्थिति अनिवार्य रूप से होने लगी। इस संपूर्ण काल खंड में 'राष्ट्रीय सभा' को अपनाने वाले समूह में वर्तमान विख्यात मराठी लेखिका श्रीमती सरोजीनी बाबर का समावेश था। बहन सरोजिनी के एक भाई जवाहर की एक दुर्घटना में मृत्यु होने बाद उन्हें सहारा देने के लिए आगे आने वाले यशवन्त जी ही थे। जीवन के अंतिम क्षणों तक सरोजिनी बाबर को प्रति वर्ष भाई दूज के अवसर पर सस्नेह भेट का क्रम अखंड चलता रहा।

1943 में महाविद्यालय की द्वितीय वर्ष की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने वाले यशवंत जी को तर्कशास्त्र जैसे विषय में 200 अंक में से 144 अंक प्राप्त हुए। ऐसा कहते है कि इतने अधिक अंक प्राप्त करने वाले प्रा. ना. सी. फडके (विख्यात मराठी साहित्यकार) के बाद यशवन्त जी ने ही यह सम्मान प्राप्त किया। बाद में अपने महाविद्यालय के मित्रों की सहायता से उन्होंने 'इंटरमीडियट आर्ट्स स्टडी सर्कल' नामक चर्चा मंडल स्थापित किया।

इसी काल-खंड में पहली बार वह सुदूर जलगांव जिले के फैजपूर गांव में संघ विस्तारक बनकर गए और वहां संघ कार्य विस्तार में भरपूर सुयश प्राप्त किया। अपनी मानस भगिनी लीलाताई बाबर को 1943 की दीपावली की भाईदूज को वैचारिक भेंट देते हुए यशवन्त जी ने एक आश्वासन दिया कि पूरे जीवन में वह अपना कर्तव्य कभी नहीं भूलेंगे। 1944 के मई माह में संघ शिक्षा वर्ग के प्रथम वर्ष में वह सम्मिलित हुए। 1945 में प्रशिक्षण का दूसरा वर्ष भी उन्होंने पूरा किया। उसी वर्ष वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक बनकर सर्वप्रथम नासिक शहर गए। वहां श्री राजाभाऊ गायधनी एवं श्री सदानंद जोशी (मी अत्रे बोलतोय- एक पात्री नाट्य प्रयोग के ख्यातिप्राप्त

अभिनेता) उनके सहकारी बने । इन दोनों ने यशवन्त जी को 'यशवन्तराव' कहना प्रारंभ कर दिया। तभी से वह सबके 'यशवन्तराव' बन गए ।

जून 1947 में वह नासिक शहर से सोलापुर आ गए और 1952 तक वहीं काम करते रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति और देश विभाजन के दौरान वह सोलापुर शहर में संघ प्रचारक थे। 1947 में हुए देश विभाजन को लेकर उत्तेजक भाषण करने वाले को यशवन्तराव हमेशा शांत करते थे। उनका एक वाक्य इस संदर्भ में ध्यान में रखने योग्य है कि किसी को सिरफिरा बनाने की अपेक्षा हृदय करुणा से आप्लावित करना अधिक महत्वपूर्ण है।

1952 में वह संघ प्रचारक की जिम्मेदारी से मुक्त होकर पुणे आ गए। सोलापूर में संघ के जिला प्रचारक रहे स्व. रामभाऊ म्हाळगी नगर में वकालत कर रहे थे। उन्होंने

यशवन्तराव को तत्कालीन जनसंघ का प्रांत कार्यालय का कार्यभार सौंपा, जिसके कुछ समय तक वह व्यवस्थापक रहे। 1955 में उन्होंने एम. ए. (अंग्रेजी साहित्य) की परीक्षा प्रथम क्रमांक से उत्तीर्ण की और फिर मुंबई के के. सी. महाविद्यालय में प्राध्यापक बन गए। 1956 में वह बांद्रा (मुंबई) स्थित नेशनल महाविद्यालय में आ गए और वहीं अंग्रेजी विभाग प्रमुख के रूप में निवृत्त होने तक अर्थात 1985 तक कार्यरत रहे।

1956 में ही उन्होंने विवाह किया। मुंबई में प्राध्यापक की नौकरी करने के साथ वह संघ के मुंबई महानगर के बौद्धिक प्रमुख के रूप में भी कार्य करने लगे। संघ सूचनानुसार उन्हें अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) का कार्यभार सम्भालने की जिम्मेदारी सौपी गई। वह क्षण अभाविप के लिए स्वर्णिम क्षण सिद्ध हुआ।

युवा-मन से सुसंवाद करने वाला, आधुनिक कालोचित विचारों से युक्त, प्रयोगशील वृत्ति धारण करने वाला, नई कल्पनाओं का नए संदर्भ में स्वागत की दृष्टि रखने वाला, विचार-शीलता के साथ व्यावहारिक मर्यादाओं का नए संदर्भ में स्वागत की दृष्टि रखने वाला) और निश्चयी कार्यकर्ता, नेता, मार्गदर्शक व्यक्तित्व यशवन्तराव के रूप में अभाविप को मिला। प्रारम्भ में उन पर मुंबई स्थित अभाविप शाखा की जिम्मेदारी आई। उस समय वह एक संगठन मंत्री के रूप में अभाविप कार्य का संचालन करते थे। उनका घर ही अभाविप का 'कार्यालय' बन गया। 1961 में उनके प्रयत्नों से इलाहाबाद में होने वाले राष्ट्रीय अधिवेशन में मुंबई के बीस प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। विशेष रूप से उनमें छात्रा प्रतिनिधि का भी समावेश था। अभाविप के विकास क्रम में यह घटना महत्वपूर्ण मानी जा सकती है। यह भी सत्य है कि स्वयं यशवन्तराव छात्राओं का सहभाग अभाविप कार्य में बढ़े, इसका विशेष ध्यान रखते थे।

1958 से 1961 तक तीन वर्ष के कालखंड में यशवन्तराव ने भाषा विज्ञान का विशेष अध्ययन किया। 1961 में अभाविप की पहली दैनंदिनी (डायरी) प्रकाशित हुई, जिसको साकार करने में उनका सहकार्य अत्यंत महत्वपूर्ण था। उन्होंने विविध प्रकल्पों, कार्यक्रमों के द्वारा अभाविप के कार्य में सातत्य निर्माण किया। महाराष्ट्र प्रदेश अभाविप का विधिवत प्रारम्भ 1964 प्रदेश अधिवेशन से हुआ। उसके पश्चात उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर प्राथमिक स्वरूप में कोई कार्य रचना प्रारम्भ हो, इसके लिए प्रयास शुरू किए। सभी प्रकार के प्रयत्नों के फलस्वरूप अखिल भारतीय कार्य की दृष्टि रखने वाले 5/6 कार्यकर्ताओं की एक "टीम" उन्होंने तैयार की। धीरे-धीरे अभाविप "अखिल भारतीय" होने लगी।

1960 से 1964 के कालखंड में यशवन्तरावजी के तीन पुत्ररत्नों ने जन्म लिया। समूचा गृहस्थ जीवन उन्होंने आर्थिक दृष्टि से मध्यम वर्ग के लोगों की तरह ही व्यतीत किया, कभी अधिक धन लाभ की चिन्ता नहीं की और इस कार्य में उन्हें पत्नी (श्रीमती शशीकला ताई) का पूरा सहयोग मिला। किसी पारिवारिक कार्य में खर्च करने की अपेक्षा किसी को आर्थिक सहायता देने को अधिक प्रधानता दी गई।

1966 में अन्तर्राज्य छात्र जीवन दर्शन (स्टूडेंट एक्स्पीरिएन्स इन इंटरस्टेट लिविंग) प्रकल्प के अंतर्गत स्थापित हुए ट्रस्ट के अध्यक्ष के रूप में उन्हें चुना गया । अभाविप के कार्य में उन्होंने अपने लिए 'संगठन कार्य' की जिम्मेदारी ली। इसीलिए वह अध्यक्ष या अन्य पदों से सदा दूर रहने का आग्रह रखते थे । 1967 में अभाविप के एक ज्येष्ठ कार्यकर्ता प्रा. दत्ताजी डिडोलकर के आग्रही निर्देश के कारण यशवन्तराव जी ने इंदौर में आयोजित अधिवेशन में राष्ट्रीय अध्यक्ष पद को स्वीकार किया।

1967 से 1970 तक के कालखंड में अभाविप के लिए महाविद्यालय में जाकर सदस्य बनाना, समूह में मंडलाकार बैठक-चर्चा सत्र लेना, मेधावी छात्र अभिनंदन समारोह जैसे कई उपक्रम शुरू हुए, जिनका मूल आधार यशवन्तरावजी की योजना थी। अभाविप का कार्यालय कार्यकर्ताओं की मालिका निर्माण करने की प्रयोगशाला बने, यह विचार उन्होंने प्रस्थापित किया। 1974 में अभाविप की रजत जयंती के उपलक्ष्य में होने वाले अधिवेशन के डेढ़ वर्ष पूर्व संगठन की भावी योजना का पूरा विवरण यशवन्तरावजी ने लिखित रूप में तैयार किया था। 9 जुलाई 1974 को आयोजित रजत जयंती अधिवेशन तक अभाविप की राष्ट्रव्यापी रचना सुस्थिर होने लगी थी।

26 जून 1975 को पूरे देश में आपातकाल घोषित किया गया। उसके विरोध में अभाविप ने सत्याग्रह शुरू किया। 13 दिसंबर 1975 को उन्हें गिरफ्तार करके मुंबई के ऑर्थर रोड स्थित कारागार में भेज दिया गया। एक सप्ताह बाद ही उन्हें नासिक के मध्यवर्ती कारागार में

लाया गया, जहां वह 19 माह तक जेल में रहे। जेल में उन्होंने उपक्रमशीलता ने नए आयाम ढूंढ निकाले और जेल के अंधकारमय तथा भविष्य के प्रति अनिश्चितता से उद्विग्न हजारों जेल बंधुओं को मानसिक धैर्य प्रदान किया। जेल निवासियों में सामूहिक कार्यक्रम की योजना बनाने वाली समिति के प्रमुख यशवंतराव थे। कारावास के इस कालखंड में मराठवाडा के कलमनूरी गांव के वामपंथी कार्यकर्ता श्री. खाजाभाई जामकर से छह माह में उर्दू भाषा सीखकर अन्य लोगों के लिये उर्दू सिखाने का तीन माह का पाठ्यक्रम तैयार किया। इसी प्रकार गीत स्पर्धा, एकत्रीकरण, व्याख्यान, उर्दू अध्ययन, आयुर्वेद अध्ययन आदि कई उपक्रम आरम्भ हुए। फरवरी 1977 में वह जेल से मुक्त हुए। उसके बाद 1977 के लोकसभा चुनाव में जनता पार्टी के कार्यालय की जिम्मेदारी उन्होंने संभाली। बाद में उन्होंने फिर से अभाविप का कार्य शुरू कर दिया।

1977-78 में उन्होंने 'मनोगत' मासिक पत्रिका का संपादन किया। इसी कालखंड में अभाविप के 'छात्रशक्ति' मासिक का शुभारंभ हुआ। इसके प्रकाशन की ओर यशवन्तराव का पूरा ध्यान रहता था। 1983 में राष्ट्रीय कार्यकारिणी बैठक के समय उन्हें पीलिया बीमारी ने आ घेरा। बुखार से पीड़ित होने के बाद भी वह महाविद्यालय और अभाविप कार्य में लगे रहे। अक्टूबर 1984 में महाराष्ट्र के प्रमुख कार्यकर्ताओं की बैठक हुई। जिसका संचालन उन्होंने स्वयं किया। नवम्बर 1984 में यह निर्णय लिया गया कि अगले वर्ष यशवन्तराव जी के इकसठ वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में 'षष्ठिपूर्ति' समारोह आयोजित किया जाए। उन्होंने इसका कड़ा विरोध किया। लेकिन बाद में यह संगठन का निर्णय है, ऐसा अस्त्र चलाने पर उनकी सहमति मिली। 25 अप्रैल 1985 को वह नेशनल कालेज से सेवानिवृत्त हुए। 28 अप्रैल को मुंबई में उनका भव्य अभिनंदन समारोह सम्पन्न हुआ। उसमें उन्हें दो लाख ग्यारह हजार रुपयों की धनराशि अर्पित की गई। बाद में उन्होंने यह रकम विद्यार्थी निधि ट्रस्ट को अर्पित कर दी। लेकिन वर्ष भर उनके अभिनंदन कार्यक्रम नासिक, कोल्हापुर, पंढरपुर, पणजी, सांगली, रत्नागिरी, महाड, सोलापुर, मराठवाडा के साथ महाराष्ट्र के बाहर भी दिल्ली, बेंगलुरू आदि स्थानों में होते रहे ।

27 अप्रैल 1986 को अंतिम समारोह पुणे नगर में सम्पन्न हुआ। इस गरिमामय समारोह में प्रमुख अतिथि के रूप में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के तत्कालीन सरसंघचालक पूज्य बालासाहब देवरस भी उपस्थित रहे। जून 1986 में संघ के महाराष्ट्र प्रदेश के बौद्धिक प्रमुख की जिम्मेदारी उन्हें मिली और वह अभाविप की जिम्मेदारी से मुक्त हो गए। उस समय भी बुखार और पीलिया बीमारी उन्हें त्रस्त कर रही थी, फिर भी प्रबल इच्छा शक्ति के आधार पर उन्होंने नई जिम्मेदारी स्वीकार करके उसके निर्वहन का प्रयास जारी रखा। 1987 में उनका स्वास्थ्य और ख़राब हो गया और जलोदर बीमारी ने उग्र रूप धारण किया। 1 दिसम्बर से उनके स्वास्थ्य में तेजी से गिरावट आने लगी और 6 दिसम्बर को बेहोशी ने उन्हें घेर लिया। उसी दिन मध्यरात्रि में 1 बजकर 20 मिनट पर उन्होंने नश्वर देह का त्याग किया। अनेक प्रतिष्ठित नागरिक एवं अनगिनत कार्यकर्ताओं की उपस्थिति में उनके पार्थिव देह को उनके ज्येष्ठ पुत्र ने अग्नि को समर्पित कर दिया और फिर यशवन्तराव नामक एक 'महापर्व' समाप्त हो गया। ■

(संकलन : अजीत कुमार सिंह)

सुधी पाठकों !

शिक्षा क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका के रूप में 'राष्ट्रीय छात्रशक्ति' अप्रैल 2025 अंक आपके समक्ष प्रस्तुत हैं। यह अंक महत्वूर्ण लेख एवं विभिन्न समसामयिक घटनाक्रमों एवं खबरों को समाहित किए हुए हैं। आशा है, यह अंक आपके आवश्यकताओं के अनुरूप उपादेय साबित होगा। कृपया 'राष्ट्रीय छात्रशक्ति' से संबंधित अपने सुझाव एवं विचार हमें नीचे दिए गए संपादकीय कार्यालय के पते अथवा ई-मेल पर अवश्य भेजें : -

'राष्ट्रीय छात्रशक्ति'
26, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग,
नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23216298
www.chhatrashakti.in
rashtriyachhatrashakti.abvp@gmail.com
www.facebook.com/Rchhatrashakti
www.twitter.com/Rchhatrashakti
www.instagram.com/ Rchhatrashakti

The necessity behind the abolition of titles under Article-18 of Constitution of India

■ Dr. Pradeep Kumar

On November 30th and December 1st, 1948, Indian Constitution leaders decided to ban titles to create equal society standards. During a Constituent Assembly meeting, Draft Article-12 became Article-18 through its evolution and development.

Titles Under British rule in India, the colonial authorities distributed honors as rewards to those who worked passionately with and for the colonial administration. The government used titles like Sir and Rai Bahadur to develop fake classes that helped them arrange and keep unfair social differences. British officials used titles to run their government system including social class divisions. The colonial government used special status to build a loyal group by assigning selected individuals separate ranks in society. Eliminating these titles set both symbolic and functional rules to build a country where everyone has equal status.

On November 30, 1948 members of the Constituent Assembly publicly rejected titles and made clear they should end in free India. According to Member R. K. Sidhwa the British practice of granting titles had become shameful since its introduction during colonial rule. Few people considered honorific titles acceptable as a large part of society rejected them. According to Sidhwa the nation must get rid of titles because they would weaken the Constitution's equality measures and social class divisions. Many people strongly opposed title system during this time. The group debated that mandatory title designations damaged the basic values of equality and democracy that underpin a free nation. According to this argument state-bestowed titles create wrong judgments about how much a person deserves their position and what they bring to society. Mr. Naziruddin Ahmad wanted titles removed yet asked if this proposal could actually work as a basic right in law. He wanted to know if banning titles met all criteria needed to become a protected right under the Constitution. Ahmad thought about how to challenge the state if they gave titles by mistake despite the obstacles this situation created. Although he had doubts he still backed the concept that the government should not grant or accept titles related to colonial rule. He believed that official references should stop using titles because they promote inequality.

The Constitution framers saw that titles create more than just appearances because these institutions shape our entire society. The authors wanted to build a social system that treats citizens equally instead of letting official ranks make some people appear higher than others. As a young nation, we wanted to establish unity among our people through this important decision. The chosen government system clashed with the democratic principles written in our Constitution. As part of its independence, the new nation promised to

end systems that create social differences and unfair treatment between people.

On December 1, 1948, the Assembly examined Draft Article-12 which became Article-18 to eliminate official positions and titles. The Assembly studied multiple changes to Article 18 to make it work better and solve related problems. The law now permits using titles connected to academic adventures and military rankings. Members accepted that official titles based on social standing create problems but genuine success awards including educational and military achievements should remain approved honors. The Assembly versions of these changes passed quickly as everyone agreed about dividing status-based titles from achievement-based titles. The discussions included addressing the matter of formal state titles from other countries. A member suggested changing clause (2) to prevent Indian government recognition of foreign titles. Under the official text Indian citizens could not assume foreign titles yet the national government could still grant such titles. Under the proposed change a loophole emerged that allowed foreign titles to retain their prestige through recognition by the Indian government. The Assembly members wanted the equal-rights protection from India to apply to all international partnerships. An additional recommendation suggested taking away Indian citizenship rights along with the prohibition on accepting foreign titles. The Assembly showed its deep concern about the problem through this recommendation. Dr. Ambedkar showed that Parliament held the authority to set punishment methods for unacceptable actions. The government kept the rules open-ended to defend the Constitution's guidelines effectively.

The final version of Article-18 of the Indian Constitution incorporated the following key provisions :

-The state shall not confer any titles, except those related to military or academic distinctions.

-No citizen of India shall accept any title from a foreign state.

-A foreigner holding any office of profit or trust under the state shall not accept any title from a foreign state without the consent of the President.

-No person holding any office of profit or trust under the state shall accept any present, emolument or office from a foreign state without the consent of the President.

These provisions were designed to ensure that the state did not perpetuate practices that created artificial distinctions among citizens. By prohibiting the acceptance of foreign titles, the framers sought to reinforce national unity and pride, ensuring that Indian citizens were not subordinated to foreign honors or influences.

The abolition of titles was a landmark decision that reflected India's commitment to the principles of equality, unity, and democracy. By eliminating state-sanctioned and foreign titles, the framers of the Constitution sought to break away from the colonial past and create a society based on merit and inherent dignity.

These decisions meant more than merely titles. A title during British rule reminded an individual of society's hierarchical inequality. Their decision reflected a new stage where all were equal, free from any historical background or classification. It brought the country forward toward the possibility of a nation of artificial distinction substituted by merit-based acknowledgment and service for all. ■

(Author is Associate professor, School of Law Governance and public policy, Chanakya University, Bengaluru)

लद्दाख के विद्यार्थियों ने की राष्ट्रीय एकात्मता की अनुभूति

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) द्वारा आयोजित स्टूडेंट एक्सपीरियंस इन रीजनल अंडरस्टैंडिंग (एसईआरयू) एक महत्वपूर्ण पहल है। इस पहल का मुख्य उद्देश्य लद्दाख के दूरदराज़ क्षेत्रों में रहने वाले छात्र-छात्राओं को देश के अन्य हिस्सों में भेजकर वहां की संस्कृति, रहन-सहन, शिक्षा प्रणाली और समाज के बारे में समझ विकसित करना है। गत 12 मार्च से 21 मार्च के मध्य हुई यात्रा के लिए चांगथांग, तुरुतक, पैंगोंग, जंस्कार, करगिल, नुब्रा, और लामायुरु जैसे स्थानों से छात्र-छात्राओं का चयन किया गया। 20 छात्र-छात्रा प्रतिनिधियों वाले दल को देश के विभिन्न हिस्सों में जाने का अवसर मिला, जहां उन्होंने स्थानीय समाज, सांस्कृतिक विविधता, ऐतिहासिक धरोहरों और आधुनिक विकास को प्रत्यक्ष रूप से देखा। लोकसभा में उन्होंने संसदीय कार्यप्रणाली को निकट से देखा, प्रधानमंत्री संग्रहालय में भारत के प्रधानमंत्रियों के योगदान को समझा। दिल्ली में छात्र-छात्राओं ने केंद्रीय मंत्री जितेंद्र सिंह से मुलाकात करने के साथ ही जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय का भी भ्रमण किया। दिल्ली विधानसभा में स्पीकर विजेंद्र गुप्ता से मुलाकात के दौरान छात्र प्रतिनिधियों ने अपने अनुभव साझा किए। हिमाचल प्रदेश और पंजाब में दल ने विभिन्न बौद्धिक एवं धार्मिक स्थलों का भ्रमण किया। जम्मू में उन्होंने उपराज्यपाल मनोज सिन्हा के साथ चर्चा करके प्रशासनिक कार्यप्रणाली को समझा।

एसईआरयू द्वारा आयोजित यह यात्रा छात्रों को न केवल विभिन्न राज्यों की पृष्ठभूमि से परिचित करा रही है, बल्कि उन्हें प्रशासनिक व्यवस्था, उच्च शिक्षा संस्थानों और सांस्कृतिक धरोहरों के महत्व को भी समझने का अवसर दे रही है। ■

(राष्ट्रीय छात्रशक्ति टीम)

। सीमा दर्शन यात्रा ।

चुनौतियों को समझने के लिए सीमान्त ग्रामों का भ्रमण

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) असम प्रदेश एवं सीमांत चेतना मंच पूर्वोत्तर के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित सीमा दर्शन यात्रा में शामिल छात्रों ने बांग्लादेश एवं भूटान से लगने वाले नौ सीमावर्ती जिलों के विभिन्न गांवों का भ्रमण किया। इस दौरान छात्र स्थानीय भौगोलिक स्वरूप को जानने के साथ ही सीमान्त ग्रामों में निवास करने वाले वाले ग्रामीणों के दैनिक जीवन में आने वाली चुनौतियों से भी परिचित हुए। भ्रमण में छात्रों ने सीमा पर तैनात सीमा सुरक्षा बल (बीएसएफ) एवं सशस्त्र सीमा बल (एसएसबी) के जवानों से भी मुलाकात की और उनके साथ विचार-विमर्श किया।

अभाविप असम प्रांत मंत्री हेरोल्ड मोहन ने बताया कि यात्रा में भाग लेने वाले 139 विद्यार्थियों को 15 अलग-अलग समूहों में बांटा गया। सभी समूहों के नाम असम एवं देश के महापुरुषों के नाम पर रखे गए। यात्रा में शामिल विद्यार्थियों ने क्रमशः धुबरी, श्रीभूमि, कछार, उदालगुड़ी, दक्षिण सालमारा, बक्सा, तामूलपुर, चिरांग, कोकराझार जैसे सीमावर्ती क्षेत्रों का भ्रमण किया। इस दौरान वह सभी स्थानीय ग्रामीण परिवारों के साथ उनके घर पर रुके और उनकी जीवनशैली को अनुभव किया। यात्रा में हिस्सा लेने वाले वाले प्रतिनिधियों ने बताया कि सीमा पर खड़े होकर तारबंदी के पास चलने मात्र से रोमांच से मन भर जाता था। सीमावर्ती ग्रामों में जाकर बहुत कुछ नया सीखने और जानने को मिला। अभाविप का मानना है कि सीमा की रक्षा का दायित्व सिर्फ सेना का नहीं है, बल्कि सीमावर्ती एवं देश के अन्य हिस्सों में रहने वाले नागरिकों का भी है। देश की भौगोलिक सीमाओं को जानने एवं वहां की परिस्थितियों से अवगत कराने के उद्देश्य से अभाविप ने सीमा दर्शन यात्रा का आयोजन किया। ■

(राष्ट्रीय छात्रशक्ति टीम)

मैथिली मृणालिनी बनी पटना विश्वविद्यालय छात्रसंघ की पहली महिला अध्यक्ष

पटना विश्वविद्यालय छात्र संघ के इतिहास में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) ने एक नया अध्याय जोड़ दिया है। विश्वविद्यालय के 108 वर्षों के इतिहास में पहली बार किसी छात्रा ने छात्रसंघ अध्यक्ष पद पर विजय हासिल करके इतिहास बना दिया है। चुनाव में अभाविप प्रत्याशी मैथिली मृणालिनी ने 603 मतों के अंतर से नेशनल स्टूडेंट्स यूनियन ऑफ इंडिया (एनएसयूआई) प्रत्याशी को पराजित कर यह ऐतिहासिक उपलब्धि हासिल की है।

1974 में पहली बार पटना विश्वविद्यालय छात्र संघ चुनाव आयोजित हुए थे। उसके बाद से अब तक किसी भी छात्रा को अध्यक्ष पद के लिए नहीं चुना गया था। लेकिन अबकी बार हासिल हुई उपलब्धि ने न केवल छात्र राजनीति में महिलाओं की भागीदारी को मजबूत किया है, बल्कि यह छात्र शक्ति और सशक्त नेतृत्व की दिशा में भी महत्वपूर्ण कदम है।

अभाविप ने अबकी बार छात्र संघ चुनाव में योग्य, सशक्त एवं कर्मठ प्रत्याशी के रूप में मैथिली मृणालिनी को मैदान में उतारा था। चुनाव में जीत हासिल करने के बाद मैथिली मृणालिनी ने कहा कि यह केवल उनकी व्यक्तिगत विजय नहीं, बल्कि उन सभी छात्राओं की जीत है जो विश्वविद्यालय में अपने अधिकारों और नेतृत्व के अवसरों की प्रतीक्षा कर रही थीं। हमारा संकल्प 'फाइव पी'-प्रवेश, परीक्षा, पाठ्यक्रम, परिसर और परिणाम-को बेहतर बनाने का है। पटना विश्वविद्यालय को शैक्षणिक उत्कृष्टता का केंद्र बनाएंगे और छात्रों की सभी आवश्यकताओं को प्राथमिकता देंगे। इसके गौरव को पुनर्स्थापित करने के लिए हर संभव प्रयास किया जाएगा।

अभाविप ने ऐतिहासिक जीत पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि अभाविप ने सदैव छात्र हितों की रक्षा और नेतृत्व के विकास को प्राथमिकता दी है। मैथिली मृणालिनी की जीत केवल पटना विश्वविद्यालय तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पूरे देश में छात्र राजनीति में महिला सशक्तिकरण की एक प्रेरणादायक मिसाल बनेगी। अभाविप का उद्देश्य केवल चुनाव जीतना नहीं, बल्कि छात्र राजनीति को सकारात्मक दिशा में ले जाना है। यह विजय छात्रों के विश्वास, परिश्रम और संकल्प की जीत है और अभाविप इसी ऊर्जा के साथ छात्र हितों के लिए काम करती रहेगी। ■

(राष्ट्रीय छात्रशक्ति टीम)

सजीव हुई 'विविधता में एकता' की भावना

भारतीय रंगमंच कला की समृद्धि और व्यापकता का प्रदर्शन

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) के आयाम राष्ट्रीय कला मंच द्वारा वर्धा स्थित महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय में विरंगम नाम से तीन दिवसीय विदर्भ रंग महोत्सव का आयोजन किया गया। महोत्सव में विभिन्न नाट्य प्रस्तुतियों के माध्यम से देश की सांस्कृतिक विविधता का सजीव चित्रण दिखाई दिया। महोत्सव में देश के विभिन्न क्षेत्रों की सांस्कृतिक विविधता के साथ ही विभिन्न भाषाओं (मराठी, हिंदी, मैथिली, भोजपुरी, अवधी आदि) में नाटक और संगीत प्रस्तुत किए गए। सम्पूर्ण आयोजन ने 'अनेकता में एकता' की भावना को सजीव रूप में प्रस्तुत किया। रंगमंच प्रेमियों और कलाकारों के लिए यह महोत्सव एक ऐसा अवसर बना, जहां वह अपनी कला का प्रदर्शन करते हुए भारतीय रंगमंच की विरासत को जीवंत स्वरूप में सामने रखने में सफल हुए ।

महोत्सव का उद्घाटन गत 27 मार्च को अभाविप विदर्भ प्रांत अध्यक्ष प्रा. श्रीकांत परबत ने किया। इस अवसर पर राष्ट्रीय कला मंच (विदर्भ) प्रांत प्रमुख अविनाश तोड़साम, राष्ट्रीय छात्रशक्ति (विदर्भ) प्रांत संयोजक प्रेम झा, कार्यक्रम संयोजक शुभ्रांशु कुमार पाण्डेय, कला मंच की रंगशाला टोली प्रमुख ऋषिराज शुक्ला प्रमुख रूप उपस्थित रहे। महोत्सव के पहले दिन रविंद्रनाथ टैगोर द्वारा रचित प्रसिद्ध नाटक 'डाकघर' का मंचन हुआ, जिसका निर्देशन शांडिल्य मनीष तिवारी ने किया। 'डाकघर' नाटक बीसवीं सदी के ग्रामीण बंगाल के परिवेश में अनाथ बालक अमल की कहानी पर केंद्रित है, जो एक लाइलाज बीमारी से ग्रस्त होने के कारण अपने घर तक सीमित है। खिड़की से बाहर की दुनिया देखने और लोगों से संवाद स्थापित करने की उसकी मासूम चाहत को कलाकारों ने अपने मार्मिक प्रस्तुति से दर्शकों को भावुक कर दिया। दूसरे दिन मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित प्रसिद्ध कथा 'बड़े भाईसाहब' का मंचन किया गया। कला मंच की रंगशाला टोली द्वारा निर्देशित इस नाटक ने

शिक्षा और बड़े-छोटे भाई के संबंधों की गहरी अंतर्दृष्टि को प्रस्तुत किया। यह नाटक दो भाइयों के विचारों और उनके शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण के विरोधाभास को उजागर करता है। छोटे भाई की सरलता और बड़े भाई की गंभीरता के बीच के संवादों ने दर्शकों को मनोरंजन के साथ-साथ चिंतनशील भी बनाया।

महोत्सव के तीसरे दिन मोनोलॉग प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसमें देश के विभिन्न हिस्सों से आए प्रतिभागियों ने अपनी एकल नाट्य प्रस्तुतियां दीं। इसके साथ ही, एक रंग-संगीत कार्यक्रम भी हुआ, जिसमें वर्धा की प्रसिद्ध बैंड 'अंतर्नाद' ने देश की विभिन्न भाषाओं में भजन एवं लोकगीत प्रस्तुत किए। यह संगीतमय प्रस्तुति दर्शकों के लिए एक अविस्मरणीय अनुभव बन गई।

महोत्सव के समापन समारोह में सांस्कृतिक श्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र (सीसीआरटी) नई दिल्ली के अध्यक्ष डा. विनोद नारायण इंदुलकर, अभाविप (विदर्भ) प्रांत संगठन मंत्री विक्रमजीत कलाने एवं राष्ट्रीय कला मंच (विदर्भ प्रांत) संयोजक मनीष तिवारी प्रमुख रूप से उपस्थित रहे। ■

(राष्ट्रीय छात्रशक्ति टीम)

डा. बाली ने किया राष्ट्रवादी चिंतन से हिन्दी साहित्य का पोषण : दत्तात्रेय होसबाले

देश के विख्यात पत्रकार, मूर्धन्य साहित्यकार एवं राष्ट्रवादी विचारक डा. सूर्यकांत बाली के निधन पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने शोक व्यक्त किया है। वह पिछले कुछ समय से बीमार चल रहे थे। डा. बाली के निधन पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह दत्तात्रेय होसबाले ने गहरी संवेदना व्यक्त करते हुए अपने शोक संदेश में कहा कि प्रख्यात लेखक, साहित्यकार डा. सूर्यकांत बाली के देहावसान का दुःखद समाचार है। डा. बाली ने अपने प्रखर राष्ट्रवादी चिंतन से हिन्दी साहित्य का पोषण किया। उनकी रचनाओं से साहित्यिक एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में नई रोशनी आई। हिंदी और संस्कृत भाषा के वह मूर्धन्य ज्ञाता थे। डा. बाली की विद्वत्ता के प्रति आदर एवं सम्मान से मैं नतमस्तक हूं। उनकी स्मृति में भावपूर्ण श्रद्धांजलि समर्पित करता हूं और ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करें। उनके परिवारजनों एवं मित्रों को मेरी गहरी संवेदनाएं। ईश्वर शोकाकुल परिवार को यह दुख सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

जानकारी हो कि राष्ट्रवादी विचारक डा. सूर्यकांत बाली का गत 6 अप्रैल की रात राजधानी दिल्ली के एक अस्पताल में निधन हो गया। वह 81 वर्ष के थे। उनका जन्म 9 नवंबर' 1943 को मुल्तान में हुआ था। बंटवारे के बाद वह दिल्ली आ गए। उन्होंने हंसराज कालेज से स्नातक (अंग्रेजी), परास्नातक (संस्कृत) और फिर दिल्ली विश्वविद्यालय से ही संस्कृत भाषा विज्ञान में पीएचडी की। कालेज में रहते हुए वह अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) से जुड़े और 1973-74 एवं 1980-82 में अभाविप दिल्ली प्रांत के अध्यक्ष पद का दायित्व भी संभाला। अध्ययन-अध्यापन और लेखन क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने वाले डा. बाली 1987 में एक प्रतिष्ठित हिंदी दैनिक समाचारपत्र में सहायक संपादक और फिर स्थानीय संपादक (1994-97) पद पर रहने के बाद, वह टेलीविजन पत्रकारिता में भी सक्रिय रहे। भारत के पौराणिक आख्यानों पर आधारित उनका स्तंभ 'भारत के मील पत्थर', बाद में 'भारतगाथा' नाम से पुस्तकाकार में प्रकाशित हुआ। भारत के व्यक्तित्व की पहचान, भारतीय राजनीति के यक्ष प्रश्न, महाभारत का धर्म संकट, भारत को समझने की शर्तें और दो उपन्यास- दीर्घतमा एवं तुम कब आओगे श्यावा (पुराख्यान पर आधारित) उनकी प्रमुख रचनाएं हैं जो ज्यादातर भारत, भारतीयता और राष्ट्रीय मुद्दों पर केंद्रित हैं। ■

सूर्यकांत बाली के न होने का अर्थ

■ प्रा. गोविंद सिंह

डा. सूर्यकान्त बाली का परिवार 1947 में पाकिस्तान के मुल्तान से भारत आया था। उनके पिताजी चंद्रकांत बाली हिन्दी- संस्कृत के विद्वान थे। चार वर्ष की आयु में भारत आने वाले डा. बाली की शिक्षा-दीक्षा दिल्ली में हुई। पिता की ही तरह उन्होंने भी संस्कृत में उच्च शिक्षा ग्रहण की और रामजस कालेज में शिक्षक बन गए। वह सिर्फ संस्कृत के ही बन कर नहीं रह सके। उनकी हिन्दी, अंग्रेजी के साथ ही राजनीतिक विषयों पर गहरी पैठ थी। मैंने उनका नाम पहली बार अभाविप की पत्रिका राष्ट्रीय छात्रशक्ति के माध्यम से जाना था। 1980 में मेरे मित्र जगमोहन मलिक ने छात्रशक्ति पत्रिका देकर सुझाव दिया कि तुम इसमें भी लिख सकते हो। इसके बाद मैंने बाली जी को एक लेख भेजा, जो अगले अंक में प्रकाशित हुआ। बाद में उनका एक पत्र भी मिला। डा. बाली के साथ सीधे काम करने का अवसर 1990 से 1999 तक मिला। मेरे पत्रकार व्यक्तित्व को आकार देने में उनकी बड़ी भूमिका रही। निश्चय ही उनके निधन से राष्ट्रीय चिंतनधारा को बहुत क्षति पहुंची है और हिन्दी समाज उनका सदैव ऋणी रहेगा।

अजातशत्रु थे अभाविप के पूर्व राष्ट्रीय उपाध्यक्ष दत्ता वी. नाईक : दत्तात्रेय होसबाले

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (अभाविप) के पूर्व राष्ट्रीय उपाध्यक्ष दत्ता वी. नाईक का गत 12 मार्च को निधन हो गया। उनके निधन से दुखी अभाविप कार्यकर्ताओं ने गोवा की राजधानी पणजी में गत 29 मार्च को श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह दत्तात्रेय होसबाले ने भी अभाविप के पूर्व राष्ट्रीय उपाध्यक्ष दत्ता नाईक जी को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्हें अजातशत्रु बताया।

सरकार्यवाह होसबाले ने कहा कि दत्ता जी सबके प्रति प्रेम रखते थे। वह एक अजातशत्रु थे और उन्होंने किसी को अपना शत्रु नहीं माना और न ही किसी ने उनको अपना शत्रु माना। ऐसे व्यक्तित्व के गुणों को हम जीवन मूल्य मानते हैं। 90 के दशक में अभाविप ने चलो कश्मीर का आह्वान किया, तो वह लाल चौक पर झंडे लगाने के लिए चल पड़े। बांग्लादेशी घुसपैठियों के विरुद्ध अभाविप ने आह्वान किया तो वह सत्याग्रह में भाग लेने के लिए गोवा से चल दिए।

उन्होंने कहा कि बांग्लादेशी घुसपैठ पर लिखे गए लेखों के माध्यम से उन्होंने लोगों को जागरूक किया। उन्होंने आपातकाल, असम आंदोलन और राष्ट्रीय एवं राजभाषा आंदोलन जैसे कई महत्वपूर्ण आंदोलनों में भाग लेकर महती भूमिका का निर्वहन किया। प्राध्यापक दत्ता नाईक आज स्मृति मात्र है। जिस विचार के लिए, जिस समाज के लिए, जिस राष्ट्र के लिए उन्होंने जीवनपर्यंत तपस्वी की भांति कार्य किया, वह हम सबके सामने सदैव उपस्थित रहेगा।

वनवासी कल्याण आश्रम के राष्ट्रीय संगठन मंत्री अतुल जोग ने उन्हें श्रद्धांजलि देते हुए कहा कि दत्ता जी आजीवन विचारों के प्रति समर्पित रहे। शिक्षा को लेकर वह हमेशा आग्रही रहे। श्रद्धांजलि सभा में दत्ता जी के पुत्र राघवेंद्र नाईक ने कहा कि बाबा यानी मेरे पिता का हर वह इंसान उत्तराधिकारी है जो बिना स्वार्थ

के राष्ट्र और संघ का आदर करता है, जो हमेशा ज्ञान का आचरण और सम्मान करता है, जो अपने स्वार्थ से ज्यादा धर्म और राष्ट्र से प्रेम करता है। हम सभी किसी ना किसी रूप में उनके उत्तराधिकारी हैं। उनका निधन पूरे समाज की क्षति है। श्रद्धांजलि सभा में गोवा के मुख्यमंत्री डा. प्रमोद सावंत ने कहा कि आगामी पीढ़ियां उनके आदर्शों और दृष्टिकोण को अपनाएंगी तथा उनके द्वारा स्थापित शैक्षणिक और अन्य संस्थानों के माध्यम से राष्ट्रीय भावना और चरित्र वाली पीढ़ियों का निर्माण जारी रखेंगी।

कार्यक्रम में केरल के राज्यपाल राजेंद्र आर्लेकर, भाजपा प्रदेश अध्यक्ष दामोदर नाइक, महाराष्ट्र के शिक्षा मंत्री चंद्रकांत पाटिल, सांसद सदानंद तनावड़े, पूर्व सांसद नरेंद्र सवाईकर, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ स्वयंसेवक भीकूजी इदाते, अभाविप के राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री देवदत्त जोशी, सहकार भारती के राष्ट्रीय संगठन मंत्री संजय पाचपोर, वनवासी कल्याण आश्रम सहित अनेक कार्यकर्ताओं ने उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। ■

अभाविप गतिविधियों में प्रा. यशवंतराव केलकर

RNI NO.: DELBIL/2017/73636
DATE OF POSTING: 10-11 APRIL, 2025
DATE OF PUBLISHING: 8 APRIL, 2025

POST OFFICE: NDGPO, NEW DELHI
POSTING REGISTRATION NO. DL(C)-11/1409/2024-26

अभाविप गतिविधियों में प्रा. यशवंतराव केलकर